मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)

श्री हेमचन्द्राचार्य

अनुसंधान

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य विषयक संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

संपादक : विजयशीलचन्द्रसूरि

३६

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि, अहमदाबाद

2006

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)
'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

अनुसंधान

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य-विषयक
सम्पादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

३६

सम्पादकः
विजयशीलचन्द्रसूरि

श्रीहेमचन्द्राचार्य

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि
अहमदाबाद
२००६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुसन्धान ३६

आद्य सम्पादकः **डॉ. हरिवल्लभ भायाणी**

सम्पादकः **विजयशीलचन्द्रसूरि**

सम्पर्कः C/o. **अतुल एच. कापडिया**
A-9, जागृति फ्लेट्स, पालडी
महावीर टावर पाछळ
अमदावाद-३८०००७

प्रकाशकः **कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि, अहमदाबाद**

प्राप्तिस्थानः (१) **आ. श्रीविजयनेमिसूरि जैन स्वाध्याय मन्दिर**
१२, भगतबाग, जैननगर, नवा शारदामन्दिर रोड,
आणंदजी कल्याणजी पेढीनी बाजुमां,
अमदावाद-३८०००७

(२) **सरस्वती पुस्तक भण्डार**
११२, हाथीखाना, रतनपोल,
अमदावाद-३८०००१

मूल्यः Rs. 80-00

मुद्रकः **क्रिश्ना ग्राफिक्स, किरीट हरजीभाई पटेल**
९६६, नारणपुरा जूना गाम, अमदावाद-३८००१३
(फोनः ०७९-२७४९४३९३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निवेदन

परम्परागत मान्यता अने संशोधन-आ बे बाबतो परस्पर विरोधी छे एवी धारणा क्यारेक बंधाई जती होय छे. अविवेक अने अन्धश्रद्धा आवी धारणा बंधावामां मोटो भाग भजवी जतां होय छे. पारम्परिक मान्यता साथे अन्धश्रद्धा जोडाई जाय अने संशोधन साथे अविवेक जोडाई जाय त्यारे 'सत्य' ढंकाई जतुं होय छे अने 'असत्य'नुं चडी वागतुं रहे छे.

स्वस्थ श्रद्धा होय त्यारे पारम्परिक मान्यताओ परत्वे पण संशोधनात्मक दृष्टिथी विचार करी शकाय छे, अने जरूर पड्ये मान्यता-परिवर्तन पण करी शकाय छे. ए ज रीते, विवेकपूत संशोधन क्यारेय 'पारम्परिक वातो बधी खोटी ज छे' एम स्वीकारीने चालतुं नथी. संशोधनदृष्टिने कारणे पारम्परिक मान्यता साची पण पुरवार थई शके अने ते वधु शुद्ध-सम्मार्जित स्वरूपे बहार आवे एवुं पण बनी शके.

परम्परागत मन्तव्यनो पिण्ड मुख्यत्वे शास्त्रोना शब्दो द्वारा बंधाय छे. शास्त्रोनो शब्द ए श्रद्धानो विषय छे; 'ननु-नच'नो नहि. तो, संशोधनात्मक मन्तव्यनो पिण्ड ऐतिहासिक तेमज पुरातात्त्विक पुरावाओना आधारे रचातो होय छे. शास्त्रवचनो अथवा साहित्यिक प्रमाणो तेमां पोतानो सूर पुरावी जरूर शके, पण तेने हमेशां यथार्थ मानीने चालवानुं 'संशोधन' माटे शक्य नथी होतुं.

दृष्टिसम्पन्न, विवेकी मनुष्यनुं कर्तव्य छे के परम्परा तथा संशोधन-ए बन्ने वच्चे समन्वयात्मक सन्तुलन शोधवुं, बनाववुं. दृष्टिनो उघाड थयो होय तो संशोधन थकी परम्परा पुष्ट थाय तेवुं घणुं मळे, अवश्य मळे. दृष्टिना उघाडनी पूर्वशरत एटली ज: अभिनिवेश तथा पूर्वग्रहथी मुक्त बनो.

संशोधन अटकवानुं नथी. परम्परा खरेखर खोटी अथवा नबळी हशे तो ते संशोधनना प्रवाहमां तणाई ज जवानी छे. बाकी, स्वस्थ परम्पराए संशोधनथी भय राखवानुं कोई ज कारण नथी. "निर्दोषं काञ्चनं चेत् स्यात्, परीक्षाया बिभेति किम् ?" - ए वात याद राखवानी छे. भय, आक्रोश, विरोध - आ बधां वानां तो परम्परा माटे हानिकर ज बनी रहे, ए तथ्य भूलवा जेवुं नथी.

प्रमाणभूत तथ्योनुं निरन्तर अने निरन्तराय स्वागत ए आपणी परम्परानुं स्वस्थ लक्षण हो !

— शी.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

श्रीमुनिचन्द्रसूरिविरचित तीर्थमालास्तवः ॥	विजयशीलचन्द्रसूरि	1
श्राविकाद्वयव्रतग्रहणविधि ॥	सं. विजयशीलचन्द्रसूरि	14
श्रीसिद्धचक्रयन्त्रोद्धारविधि - व्याख्या ॥	सं. विजयशीलचन्द्रसूरि	23
परम योगीराज आनन्दधनजी महाराज अष्टसहस्री पढ़ाते थे ।	म० विनयसागर	29
महोपाध्याय समयसुन्दर रचित अष्टलक्षीः एक परिचय	म० विनयसागर	36
संशोधन विरुद्ध कट्टरता : घेरी चिन्तानो विषय	विजयशीलचन्द्रसूरि	42
स्वाध्याय : विशेषावश्यक भाष्यनुं शुद्धिपत्रक (४)		50
माहिती : नवां प्रकाशनो		59

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीमुनिचन्द्रसूरिविरचित
तीर्थमालास्तवः ॥

– विजयशीलचन्द्रसूरि

प्राकृतभाषानिबद्ध, १११ गाथाप्रमाण, आ तीर्थमालास्तव, तेनी अन्तिम गाथामां जणाववामां आव्या प्रमाणे, आ. मुनिचन्द्रसूरिनी रचना होवानुं जणाय छे. ते गाथामांनां ४ पदो सम्भवतः विशेषनामपरक छे, जे कर्तानी गुरुपरम्परा वर्णवे छे : महेन्द्रसूरि, भुवनचन्द्र (के भुवनेन्द्र) सूरि, चन्द्रसूरि अने मुनिचन्द्रसूरि – आ ४ नामो होवानुं समजाय छे. वस्तुपालकृत आबुतीर्थना जिनालयनी नोंध आ स्तवमां (गा. ९३) होवाने कारणे, आनो रचनासमय चौदमी सदी होवानुं मानी शकाय. स्तवकारनी गुरु-गच्छपरम्परा जाणवा माटे पट्टावलीओमां तपास करवानी रहे छे. जोके आ रचना विशे 'जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास' (मो.द. देशाई)मां कोई नोंध जोवा मळती नथी.

'तीर्थमाला' प्रकारनी रचनाओमां, भारतवर्षमां तथा समग्र ब्रह्माण्डमां ज्यां पण जिनप्रतिमा होय तथा जैन चैत्य होय; जिन-तीर्थंकरना जीवननी 'कल्याणक'नी के अन्य विशिष्ट घटना कोई स्थानमां घटी होय; अथवा कोई विशिष्ट कारणे कोई खास स्थलने 'तीर्थ' तरीके स्वीकारवामां आव्युं होय; ते सर्वने संभारवापूर्वक तेमनुं स्तवन तथा भाववन्दन करवानुं प्रयोजन, मुख्यपणे होय छे. तीर्थस्वरूप पदार्थो तथा क्षेत्रोनुं स्मरण करवुं, ए जैन संघमां एक उत्तम पुण्यकर्म अने भावयात्रारूप कर्तव्य मनायुं छे. केटलीक वार, कोई साधु-मुनिराज, कोईएक मोटा शहेरमां अथवा तो पोते पादविहार द्वारा विचर्या होय ते विभाग / परगणामां आवेल जिनालयोनुं वर्णन करती काव्यरचना पण करे छे, जे 'चैत्यपरिपाटी' अथवा 'तीर्थमाला'ना नामे ओळखाय छे. मध्यकालमां अनेक कविओए आवी रचनाओ करी छे, जे पैकी घणी प्रकाशित पण छे. परन्तु ते रचनाओ महदंशे गुजराती भाषामां होय छे. प्रस्तुत रचना 'प्राकृत'मां छे, ए तेनी विशेषता छे.

प्रथम पांच गाथामां अरिहंत-वन्दनारूप मंगलाचरण कर्या बाद कवि, पोताने अरिहंत सांपड्या होवा बदल पोतानी धन्यता प्रगट करे छे. १०-११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथामां पोते जिन-स्तुति आरंभता होवानो निर्देश तेओ आपे छे. त्यार पछी १२ थी १५ ए गाथाओमां अतीतमां थयेल २४ तीर्थंकरोनां नामो, १६-१८मां वर्तमानकालमां थयेल २४ तीर्थंकरनां नामो, तथा १९-२२मां भविष्यमां थनारा २४ तीर्थंकरोनां नामो दर्शावीने तेमनी स्तुति कविए करी छे.

जैन शास्त्रो-अनुसार, मनुष्यलोकमां अने तदुपरांत देवलोकमां घणी बधी जिनप्रतिमाओ 'शाश्वत' होय छे. ते चैत्यो तथा ते प्रतिमाओ सदाकाळ 'होय' ज छे. २२-२६ गाथाओमां पृथ्वी परनां विभिन्न स्थानोमां रहेल ते शाश्वत चैत्य/प्रतिमाओनुं स्मरण थयुं छे; अने २७-३२ गाथाओमां चार प्रकारना देवलोकमांनां चैत्यो/प्रतिमाओनुं विवरण थयुं छे. ३३मी गाथामां कवि चोखवट करे छे के आ सर्व शाश्वत प्रतिमाओ 'ऋषभ, चन्द्रानन, वर्धमान, वारिषेण' आ चार नामोथी ज ओळखाय छे.

वर्तमान समयमां, भरतखण्ड(क्षेत्र)ना तेमज अन्य क्षेत्रोना अमुक विभागमां वर्तता तीर्थंकरोने 'विहरमाण जिन' तरीके ओळखवामां आवे छे. वर्तमाने तेवा २० जिन छे. तेमनुं नाम - वर्णन ३४-३९ गाथाओमां थयुं छे. ४१मा पद्यमां जैनोमां मान्य ७ प्रमुख तीर्थोनो नामनिर्देश करीने पछीथी ते पैकी एकेक तीर्थनुं वर्णन कवि विस्तारे छे. ४२-४५मां **अष्टापदतीर्थनुं**, ४६-४८मां **उज्जयन्ततीर्थनुं**, ४९-५५मां **गजाग्रपद तीर्थनुं**, ५६-५८ मां **तक्षशिला**गत **धर्मचक्रतीर्थनुं**, ५९-६३मां पार्श्वनाथना **अहिछत्रातीर्थनुं**, ६४-६६मां वज्रस्वामीना **रथावर्त** तथा **कुंजरावर्त** तीर्थनुं, अने ६७-६८मां **सुंसुमारपुरगत चमरोत्पात तीर्थनुं** वर्णन थयुं छे.

आ पछी अन्य विविध जिनतीर्थोनुं वर्णन चालु थाय छे. ७०-७१मां समेतशिखरगिरिनी स्तवना छे. ७३-७५मां विमलगिरि-अपरनाम-शत्रुंजयतीर्थनी स्तुति छे. आमां ७४ मी गाथामां आवता 'कहमन्नह तेवीसं जिणपयजुयलाण पडिबिंबा ?' ए वाक्यथी एक ऐतिहासिक तथ्य ए जडे छे के, कर्ताना समयमां शत्रुंजय तीर्थ परना जिनचैत्यमां २३ तीर्थंकरो (नेमिनाथ सिवायना)नां चरणचिह्नो (पादुका) कोरेलो कोई पादुकापट्ट होवो जोईए. आ तीर्थ पर २३ जिन आवेला अने १ मात्र नेमिनाथ नहि आवेला, एवी जैन संघनी परम्परागत मान्यतानो आवा पट्ट द्वारा पडघो पडतो होवानुं कर्ता सूचववा मागे छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७६मी गाथामां **मथुराना सुपार्श्वस्तूप**-तीर्थनी वात छे. ७७-८०मां **भृगुकच्छ-भरुचना अश्वावबोधतीर्थ** तथा **समळीविहार**नी विगत छे. गाथा ७९ प्रमाणे, कर्तानां वखतमां भरुचना जिनालयमां जितशत्रुराजा, अश्व, समडी, सुदर्शना- आ बधांनां शिल्पो पण होवानो संकेत सांपडे छे. अने मुनिसुव्रतजिननी प्रतिमा '**जीवंतस्वामी**' तरीके ओळखाती हशे तेम पण (८०) जाणवा मळे छे. गा. ८१मां **स्थंभनपुर** (आजनुं **थामणा**)ना **पार्श्वनाथतीर्थ**नी तेमज **पावकगिरि** (पावागढ)ना **वीर-तीर्थ**नी नोंध छे. पावागढ वास्तवमां जैन श्वेताम्बर संघनुं तीर्थ हतुं, तथा वस्तुपाल-तेजपाले पण त्यां देरां करावेलां ते एक ऐतिहासिक तथ्य तो छे ज : आ गाथा तेने पुष्टि आपे छे.

८२ मी गाथामां एक नवुं ज तथ्य उजागर थाय छे. शंखेश्वर-नजीकना **पाडला** गाममां नेमिनाथनी प्राचीन मूर्ति हती ए ऐतिहासिक वात छे. ते प्रतिमा त्यां कनोज-कान्यकुब्जना राजाए स्थापी होवानो निर्देश आ गाथा द्वारा मळे छे. दन्तकथा तथा प्रबन्धकथा एवी छे के आ. बप्पभट्टिसूरिना भक्त, कान्यकुब्जनरेश 'आम' राजा माटे अम्बिकादेवीए नेमिनाथनी मूर्ति आणी हती, ते मूर्ति हाल खम्भातमां होवानी अनुश्रुति छे. परन्तु आ गाथा ते अनुश्रुतिने बदलवानी फरज पाडे छे. जोके हवे तो पाडलागाममां ते मन्दिर तथा प्रतिमा रह्यां नथी. पण ते मूर्तिने 'अइचिरमुत्ति' अर्थात् अतिप्राचीन मूर्ति तरीके कविए ओळखावी छे. निःशंक, कविना वखतमां ते प्रतिमा त्यां विद्यमान हशे.

गा. ८३मां **पारकर** देशगत **गडुरगिरि**ना ऋषभदेवनी तथा गा. ८४ मां **बाहडमेर** अने **राडद्रह**नां चैत्योनी वात आवे छे. गा. ८५-८६ मां **सत्यपुर** (साचौर)नुं वर्णन थयुं छे. त्यां पण कान्यकुब्ज-नरेशे करावेल काष्ठ-प्रतिमानो उल्लेख छे. ८५ मी गाथामां 'पनरसवच्छरसइए' ए पदनो अर्थ स्फुट थवो जोईए; कां तो पाठभूल होय एम पण बने. ८७ मी गाथा, ८६ नी जेमज, त्रुटित छे. तेमां '**यक्षवसति**' गत वीरजिननुं वर्णन छे. आ यक्षवसति एटले 'यक्ष' (मल्लवादी-भ्राता) साधुनी वसति ? 'यक्ष' नामना श्रावकनी बनावेल वसति ? के 'यक्ष' देव नामा देवजाति-विशेषनी वसति ? हाले कच्छमां 'जखदेव'नुं थानक एक प्रख्यात तीर्थ छे तो खरुं. जो ८७-८८ ए बे गाथाओ ने संयुक्त राखीने तपासीए तो, कोई एक तीर्थक्षेत्रनी ज ए वात लागे छे : यक्षवसतिमां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीरजिनः द्वितीय, चिर-प्राचीन चैत्यमां चन्द्रप्रभजिन अने तृतीय, कुमारविहारमां पार्श्वजिन; आम त्रण चैत्यनी वात होवानुं कल्पी शकाय खरुं. कदाच, आ पाटणनी ज वात होय तो बनवाजोग छे.

गा. ८९मां **बंभेवि** (ब्राह्मणवाडा ?), **पल्लि** (पाली ? के जीरापल्ली ?), **नाणय** (नाणा), **देवाणंद** (दीयाणा) - आ चार तीर्थगत वीरजिननां स्तूप चैत्योनुं कीर्तन छे. गा. ९०मां मेवाडना '**नंदिसमसेस**' नामना (?) कोई गाममां **शकटालमन्त्री**ए करावेल वीर-चैत्यनी नोंध हेरत पमाडनारी लागे छे. इतिहासमां आवी केटलीये वातो दटायेली पडी होय छे, जे आजे अज्ञातप्राय हशे. **सुकोशलमुनि** ए जैन इतिहासनुं प्रसिद्ध-विशिष्ट पात्र छे. तेमना जीवननी खास घटना चित्तोडना **मुग्गिलगिरि**(मुद्गलपर्वत ?) पर बनी हशे तेनो इशारो ९१मी गाथा आपी जाय छे. ९२-९६ गाथाओमां **अर्बुदाचल**नो महिमा व्यक्त थयो छे. गा. ९२मां विमलमन्त्रीना दश परिवारजनो गजारूढ होवानो उल्लेख इतिहासनी दृष्टिए विशिष्ट गणाय तेवो छे.

गा. ९७मां आबूपर्वतना मूळ प्रदेशस्थित '**मुण्डस्थल**'मां **नन्दिवृक्ष**-तळे **श्रीवीरप्रभु** पोताना छद्मस्थ-विहारकाळमां कायोत्सर्गध्याने रहेला ते पारम्परिक अनुश्रुतिनो; तथा गा. ९८ मां, ते स्थळे, **पुन्यराज** नामे गृहस्थे, प्रभुभक्तिथी प्रेराईने, वीरप्रभुनी प्रतिमा स्थापी हती, अने ते वर्ष वीरप्रभुना जन्मथी ३७मुं वर्ष हतुं, तेनो स्पष्ट उल्लेख कर्ता आपे छे. भगवान महावीरनी ३७ वर्षनी उंमरे तथा दीक्षा लीधाना सातमा वर्षे राजस्थानमां तेमनी प्रतिमा बन्यानो आ साहित्यिक उल्लेख, कर्ता समक्ष कोई प्राचीन सशक्त श्रुतिपरम्परा होवानो ख्याल आपी जाय छे. अने तेथीज, गा. ९९ मां कर्ता उमेरे छे के, आजे (कर्ताना समये) आ तीर्थने किञ्चित् न्यून एवा १८०० वर्ष थयां छे. आ उपरथी कर्तानो समय पण निश्चित थई शके : अत्यारे वीर संवत् २५३२ चाले छे. तेमां वीरप्रभुना आयुष्यनां ७२ वर्षो पैकी ३७ वर्ष छोडी देतां वधेलां ३५ वर्ष उमेरवाथी २५६७ थाय. तेमांथी १८०० बाद करीए तो ७६७ रहे. तेमांथी पण 'किञ्चित् न्यून' एटले पांच-दस वर्ष ओछां करीए तो पण १३ मा शतकनो छेडो आरामथी आवी जाय.

वधु स्पष्ट करीए तो, विक्रम संवत् पूर्वेना वीर निर्वाण संवतना ४७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्ष; तेमां वि.सं.ना १३०० वर्ष उमेरतां १७७० वर्ष थाय. तेमां वीर-जीवनना ७२ वर्ष पैकी ३७ वर्ष बाद करीने शेष रहेता ३५ वर्ष उमेरीए तो १८०५ वर्ष थाय. अहीं कर्ताए ९९ मी गाथामां 'किंचूणा अट्ठारस-वाससया एयपवरतित्थस्स' अर्थात् 'वर्तमानमां आ प्रवर तीर्थने किञ्चित् न्यून १८०० वर्ष थयां छे' एवो निर्देश आपेल छे तेने लक्ष्यमां लईए तो, कर्ताने १८०५ करतां दसेक वर्ष वहेला (आ स्तवना रचनाकार तरीके) लई जवा पड़े, तो १७९५ वर्षो (आ तीर्थना निर्माणने, कर्ताना समयमां) थयां होवानो अंदाज मांडी शकाय. आ समय विक्रम तेरमा शतकनी अन्तिम पच्चीसीनो समय थयो गणाय. ए रीते कर्तानो सत्तासमय तथा आ कृतिनी रचनानो समय पण तेरमा सैकानो उत्तर भाग होवानुं आपोआप निश्चित थई जाय छे.

गा. १०० मां तारणगिरि (तारंगा), कुमारपाल, अजितनाथनुं स्मरण थयुं छे. गा. १०१मां वायटनगरस्थित मुनिसुव्रतजिननी जीवंतस्वामीरूप प्रतिमानो तेमज १७०० वर्ष (ते काळे) पुराणी वीरजिन-प्रतिमानो उल्लेख नोंधपात्र छे. जे प्रतिमा चमत्कारिक होय तेने जीवंतस्वामी तरीके ओळखवानी प्रथा हशे ? गा. १०२मां श्रीमाल, आरासण, ब्रह्माण (वरमाण), आनन्दपुर, सिद्धपुर, कासद्रह, अज्जाहर (अजारा) वगेरे ऐतिहासिक स्थळोनो उल्लेख थयो छे.

गा. १०३-०४मां गुर्जर, मालव, कोंकण, महाराष्ट्र, कच्छ, पांचाल, मरुदेश, सांभर (शाकम्भरी), मथुरा, हस्तिनापुर, सौरीपुर, त्रिभुवनगिरि, गोपगिरि, काशी, अवंती, मेवाड आदि देशोमां वर्ततां दृष्ट-अदृष्ट तथा श्रुत-अश्रुत जिनबिम्बोनी स्तुति करी छे. त्यार पछीनी १०५-१११ गाथाओमां शास्त्रोमां वर्णित विभिन्न क्षेत्रो / प्रदेशोमां विद्यमान विविध प्रकारनी जिनप्रतिमाओनी, त्रिकालभावी तीर्थंकरोनी, शाश्वत-अशाश्वत सघळां तीर्थोनी, जिनवरोनां कल्याणकोनी भूमिओनी वन्दना करवापूर्वक पोतानुं नाम वर्णवीने कविए रचना समाप्त करी छे.

भावनगरनी जैन आत्मनन्दसभाना ह.लि. ग्रन्थसंग्रहगत एक प्रतिनी झेरोक्स नकलना आधारे आ रचनानुं सम्पादन थयुं छे. आनी अन्य प्रति जो मळी आवे तो जे पाठ त्रूटे छे ते मेळववानुं सुगम थई शके. प्रतिनी झेरोक्स आपवा बदल ते सभाना कार्यवाहकोनो आभारी छुं.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थमालास्तवः ॥

श्री जिनाय नमः ॥

अरिहंतं भगवंतं सव्वन्नं सव्वदंसि तित्थयरं ।
सिद्धं बुद्धं निच्चं परमपयत्थं जिणं थुणिमो ॥१॥
जय जय तिहुअणमंगल ! भट्टारय ! सामिसाल ! भयवंतो ।
देवाहिदेव ! जगगुरु ! परमेसर ! परमकारुणिअ ! ॥२॥
जय जय जगिक्कबंधव ! भवजलहीदीव ! तिहुअणपईव !।
जय जय जगचिंतामणि ! तिहुअणचूडामणि ! जिणिंद !॥३॥
जय जय सिवपहसंदण ! असरणजणसरण ! दीणउद्धरण ! ।
जय जय भवभयभंजण ! जणरंजण ! च्छिन्नजरमरण ! ॥४॥
जय कम्मजलहितारण-तरंड ! गुणरयणधारणकरंड !।
जय विसमबाणवारण-वरंड ! मुणिसुमणवणसंड ! ॥५॥
धन्नोहं पुण्णोहं सहलो मह एस माणुसो जम्मो ।
जं जिण ! तुह पयपंकय-पसायपासायमभिरूढो ॥६॥
धन्नो एसो दिवसो जाम-मुहुत्तो वि एस सुपवित्तो ।
जम्मि तुमं तिजगगुरू भवमरुपहसुरतरू पत्तो ॥७॥
अज्जं मह चिंतामणि-सुरतरु-सुरगावि-भद्दकुंभाई ।
सयलं सुलहं जं पहु ! अलद्धपुव्वो तुमं लद्धो ॥८॥
नरयभव-तिरिअ-नर-सुर-वरसमुदयनमिअचलणकमलदुगं ।
तिहुअणजणसुरतरुसम-महनिसमवि नमह तिजगपहुं ॥९॥
अट्ठदसदोसरहिए सहिए चउतीसअइसयवरेहिं ।
हयकोहे कयसोहे अट्ठमहापाडिहेरेहिं ॥१०॥
जिअरागे जिअदोसे जिअमोहे अट्ठकम्मनिम्महणे ।
सिवपुरपहसत्थोहे गयबाहे थोमि जिणनाहे ॥११॥
भरहम्मि तीअकाले पढमं वंदामि **केवलि** जिणिंदं ।
निव्वाणिजिणं **सायर-महाजसं** चेव **विमल**जिणं ॥१२॥
सव्वाणुभु(भू)इ सिरिहर, दत्तं दामोअरं सुतेअं च ।
सामिजिणं मुणिसुव्वय - सुमइं सिवगइ तहत्थाहं ॥१३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नमिमो **नमीसर**जिणं **अनिलं** च **जसोहरं कयग्घं** च ।
धम्मीसर सुद्धमई सिवकरजिण **संव(द?)ण** जिणिंदं ॥१४॥
संपइनामं वंदे चउवीसइमं जिणं सिवं पत्तं ।
अहुणा उ वट्टमाणे कमेण थुणिमो जिणवरिंदे ॥१५॥
नमिमो **रिसह**जिणिंदं, **अजिअ**जिणं **संभवं** च तित्थयरं ।
अभिनंदणजिणचंदं, **सुमइं पउमप्पह-सुपासं** ॥१६॥
चंदप्पहं च **सुविहिं सीअल**नामं जिणं च **सेअंसं** ।
वसुपुज्जं विमलं तह **अणंत-धम्मं** जिणं **संतिं** ॥१७॥
कुंथुजिणं **अरनाहं मल्लिं मुणिसुव्वयं** च **नमिनाहं** ।
नेमिं पासं वंदे चउवीसइमं जिणं **वीरं** ॥१८॥
सिरि**पउमनाह**नाहं वंदामी **सूरदेव**तित्थयरं ।
तइअं **सुपास**नामं **सयंपह**जिणं तहा तुरिअं ॥१९॥
सव्वाणुभूइदेवं **देवसुअं उदयसामि-पेढालं** ।
पुट्टिल-सयकित्तिजिणं **मुणिसुव्वय-अमम**सामिं च ॥२०॥
पणमामि **निक्कसायं निप्पुलायं** च **निम्ममं** तं च ।
सिरि**चित्तगुत्त**सामिं **समाहि**जिण-**संवर**जिणिंदं ॥२१॥
जसहर-विजयं मल्लं देवच्चायं अणंतविरिअं च ।
चउवीसइमं **भद्दं** इअ भाविजिणे नमंसामि ॥२२॥
वंदे **वेअड्ढे**सुं सासयजिणचेइआण सतरसयं ।
तीसं **वासहरे**सुं वीसं **गयदंत**सेलेसु ॥२३॥
दस **कुरु**-तरुसिहरेसुं तेसिं परिहीवणेसु तह असिई ।
वक्खारगिरिसु असिई पणसीई **मेरु**पणगम्मि ॥२४॥
इसुआरगिरिसु चउरो चत्तारि नमामि **मणुअ**सेलम्मि ।
नंदीसरम्मि वीसं **कुंडल-रुअगे**सु चउचउरो ॥२५॥
एवं गिरिकूडेसुं गिरिणइतरुसुं तरूण कूडेसु ।
इक्कारअहिअपणसय-सासयजिणभवण महिवलए ॥२६॥
बावत्तरिलक्खाहिअ-कोडी सत्तेव भवणभवणेसु ।
जिणभवणे उ असंखे, वंतरनगरेसु पणमामि ॥२७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वणचेइअ संखगुणे जोईसिएसुं तओ विमाणेसु ।
तेवीसाहिअ सहसा, सगनवई लक्ख चुलसीई ॥२८॥
सुरठाणेसु अ सवहिं, सभपणगे सट्ठि होइ पडिमाणं ।
चेइअमज्झेऽट्ठसयं, चेइअदारेसु बारसगं ॥२९॥
मिलिअं सयं असीअं चउवीससयं तु नंदिसरदीवे ।
पइचेइअ सेसेसु वीससयं पडिम तिरिलोए ॥३०॥
भवणवईभवणेसुं कप्पाइविमाण तह महीवलए ।
सासयपडिमा पनरस कोडिसय बिचत्त कोडीओ ॥३१॥
पणपन्न लक्ख पणवीस सहसा पंच सया उ चालीसा ।
तह वण-जोइ सुरेसु सासयपडिमा पुण असंखा ॥३२॥
उसभा चंदाणण-वद्धमाण तहय सिरि**वारिसेणा** य ।
सव्वा सासयपडिमा पुण पुणरवि एअ चउनामा ॥३३॥
जंबू धायइ पुक्खर-दीवे विजयाण सत्तरिसयम्मि ।
भविए भुवि बोहंते विहरंते जुगवमरिहंते ॥३४॥
नमिमो उक्कोसपए सतरिसयं तह जहन्नओ वीसं ।
कणग-कलहोअ-विद्रुम-मरगय-घण-रिट्ठरयणनिहे ॥३५॥
जंबुद्दीवे धायइ-संडे तह चेव पुक्खरद्धे अ ।
सीमंधर जुगमंधर-बाहु सुबाहू सुजाओ अ ॥३६॥
छट्ठो **सयंपह**पहु **उसभाणण** तह **अणंतविरिओ** अ ।
सूरप्पहो विसालो वज्जधरो तह य गारसमो ॥३७॥
चंदाणणो स सिरि**चंदबाहु**देवो **भुजंग ईसरओ** ।
नेमिपह वीरसेणो महभद्दो देवजससामी ॥३८॥
सिरि**अजिअवीरिअ**जिणो इअ एए संपयं विहरमाणे ।
वंदे वीस जिणिंदे तिहुअणवंदे सुकयकंदे ॥३९॥
इअ तीअमणागयवट्टमाणया सासया य विहरंता ।
थुणिआ जिणिंदचंदा पयपंकयपणयमाहिंदा ॥४०॥
अट्ठावयमुज्जिंते गयअग्गपए अ **धम्मचक्के** अ ।
पास रहावत्तणयं चमरुप्पायं च वंदामि ॥४१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठावयगिरिराए पणमेमि थुणेमि तह य झाएमि ।
धम्मधुर धरणउसभं उसभं पणमंतसुरवसभं ॥४२॥
अजिआइणो वि सेसे वरअइसेसे जिणे उ तेवीसं ।
तह सासयचउनामा सोलस पडिमाउ थूभेसुं ॥४३॥
उसभस्स समोसरणा पयपंकयअंकणा उ सिवगमणा ।
तवलद्धीरोहगसिद्धीउ अ अट्ठावयम्मि थुणे ॥४४॥
सुर-असुर-खयर-नरवर-सुरिंदवंदिज्जमाणजिणभवणं ।
अट्ठावयगिरितित्थं नंदउ जा वीरजिणतित्थं ॥४५॥
जायवकुलसिरितिलओ नेमी वयगहण-नाण-निव्वाणे ।
जउ (जहिं ?) पत्तो सो नंदउ, **उज्जंतो** तिगुणमिह तित्थं ॥४६॥
तं **रेवयगिरि**तित्थं तिलोअसारं तिलोअजणमहिअं ।
ठाणे तिलोअतिलए तिलोअपहु नेमि जह पत्तो ॥४७॥
रेवयगिरिम्मि भवजलहि-पोअभूअम्मि नेमिनिज्जामो ।
दुहिअं दुत्थिअवग्गं सग्गपवग्गं लहुं नेइ ॥४८॥
सेले **दसण्णकूडे** दसण्णभद्दस्स गव्वहरणट्ठा ।
सक्को देवाहिवई निअइड्ढिं दंसए एवं ॥४९॥
चउसट्ठिकरिसहस्सा.... चउसट्ठि अट्ठमुहजुत्ता ।
पइमुह दंता अट्ठय पइदंतं अट्ठ वावीओ ॥५०॥
पइवावि अट्ठ कमला, पइकमलं लक्खपत्त पइपत्तं ।
बत्तीसविहं नाडय, पइकण्णिअ रयणपासाओ ॥५१॥
पइपासायं अट्ठ उ, भद्दासणगाइं रयणचित्ताइं ।
सिंहासणमेगेगं सपायपीढं रयणमयचित्तं ॥५२॥
पइसिंहासणमिंदो पइभद्दासणगमग्गमहिसीओ ।
इअ तिपयाहिणपुव्वं **गयअग्गपयाणि** भुवि दो वि ॥५३॥
पडिबिंबिअट्ठो सक्को वंदइ वीरं तओ दसनभद्दो ।
विम्हिअमणसो हरिचु(थु)यणेण विलईउ पव्वइओ ॥५४॥
तो सुरवइ मुणिचलणे खामिअ उववूहिउं दिवं पत्तो ।
गयअग्गपओ एवं जाओ तह थुणह वीरजिणं ॥५५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तक्खसिलाए उसभो विआलि आगम्म पडिम उज्जाणे ।
जा बाहुबलि प्पभाए एई ता विहरिओ भयवं ॥५६॥
तो तहिअं सो कारइ जिणपयठाणम्मि रयणमयपीढं ।
तदुवरि जोअणमाणं मणिरयणविणिम्मिअं पवरचक्कं ।
तं **धम्मचक्क**तित्थं भवजलनिहिपवरबोहित्थं ॥५८॥
सिवनयरि कुसम्मवणे पासो पडिमट्ठिओ अ धरणिंदो ।
उवरि तिरत्तं छत्तं धरिंसु [पउमावई देवी (?)]॥५९॥
ता हेउं सा नयरी **अहिछत्ता** नामओ जणे जाया ।
तहिअं नमिमो **पासं विग्घविणासं** गुणावासं ॥६०॥
पडिमाए ठिअं पासं कमठो हरि-करि-पिसायपमुहेहिं ।
उवसग्गिअ तो वरिसइ अखंडजलमुसलधाराहिं ॥६१॥
उदगं जिणनासग्गं पत्तं तो लहु करेइ धरणिंदो ।
जिणउवरि फणाच्छत्तं सो ..... देहबहिपरिहिं ॥६२॥
चलणाहो गुरुनालं कमलं तो कमठ खामिउं नट्ठो ।
धरणो गओ सठाणं जिओवसग्गं नमह पासं ॥६३॥
सिरि**वयरसामि**पढमारुहिए सेलम्मि तेसि खुड्डेण ।
पढमं कयमाराहण ..... तओ चउरो ॥६४॥
रहरूढो पायाहिण काउं महिमं करिंसु खुड्डस्स ।
[सक्काईया (?)] **रहआवत्तं तित्थं** [च] तं नमिमो ॥६५॥
सिरि**वइरसामि**राहण-गरिम्मि सक्को रहेण अह करिणा ।
पायाहिणंतो सो विअ **रहावत्तो कुंजरावत्तो** ॥६६॥
जत्थ य वज्जपलाणो चमरो वीरप्पयंतरि निलुक्को ।
हरिणा मुक्को तत्तो जिणपुरओ दंसए नट्ठं ॥६७॥
तो तहि तित्थं जायं **चमरुप्पायं** च **सुंसुमारपुरे** ।
से ... वीरं तिहुअणजणवच्छलं नमिमो ॥६८॥
इअ बहुविह अच्छेरय-निहीसु अट्ठावयाइठाणेसु ।
पणमह जिणवरचंदे सुभत्तिभरनमिरमाहिंदे ॥६९॥
मासं पाओवगया वग्घारिअपाणिणो जिणा वीसं ।
सिद्धिगया जत्थ तहिं नमिमो **संमेअगिरि**सिहरं ॥७०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जं **संमेए** संघा अजिअजिणिंदा परं पि आइंसु ।
तेण य सो महितित्थं तिलोअजणतारणसमत्थं ॥७१॥
जत्थ य पढमं सिद्धो पुंडरिओऽणेगमुणिसहस्सजुओ ।
तक्काला जा जंबू असंखकोडीउ ता सिद्धा ॥७२॥
जत्थ य सिद्धा पंडव-पज्जुन्न-संबाइ जायवा बहवे ।
तं विमलं **विमलगिरिं** थुणिमो अइविमलपयहेउं ॥७३॥
जत्थ य नेमिं मुत्तुं नूणं उसभाइणो जिणा रहिआ ।
कहमन्नह तेवीसं जिणपयजुअलाण पडिबिंबा ? ॥७४॥
तहिअं **सिरिसेत्तुंजे** सुरवरपुज्जे अणेगवरचुज्जे ।
पणमह जिणवरवसभं वसभंकं वसभसुमिणं च ॥७५॥
तच्चण्णिआण वाए सेअपडागा निसाइ जहि जाया ।
खवगपभावा तं थुणि **महुराइ सुपासजिणथूभं** ॥७६॥
भरुअच्छे कोरंटग-सुव्वय-जिअसत्तु-तुरग-जाइसरो ।
अणसण-सुर-आगंतुं जिणमहिममकासि तो तहि अ ॥७७॥
अस्सावबोहतित्थं जायं तन्नाम पुणवि बीअमिणं ।
सिरि**समलिआविहारो** सिंहलिधुअकारिउद्धारो ॥७८॥
जिअसत्तु-आस-समली-पास-सुपासा सुदंसणा देवी ।
निअनिअमुत्तिहिं अज्जवि सेवंति अ **सुव्वयं** तहिअं ॥७९॥
इक्कारलक्ख छुलसीइ सहस किंचूण वरिस जस्स तहिं ।
जीवंतसामितित्थे भरुअच्छे सुव्वयं नमिमो ॥८०॥
सन्निहिअपाडिहेरं पासं वंदामि **थंभणपुरम्मि** ।
पावयगिरिवरसिहरे दुहदवनीरं थुणे वीरं ॥८१॥
कन्नउज्ज निवनिवेसिअ-वरजिणगेहम्मि **पाडलागामे** ।
अइचिरमुत्तिं **नेमिं** थुणि तह **संखेसरे पासं** ॥८२॥
पारकरदेसमंडणभूए **गड्डुरगिरिम्मि उसभजिणो** ।
नंदउ तिलोअतिलओ अवलोअणमत्तदिन्नफलो ॥८३॥
सूरा चंदे दुन्नि अ दुन्नि अछे वट्टणम्मि जिणभवणे ।
चउरो **बाहडमेरे** पासं च थुणामि **राडदहे** ॥८४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिरि**कन्नउज्ज**नरवइ-कारिअ लवणम्मि कीर **दारुमए** ।
पनरस वच्छरसइए (?) वीरजिणो जयउ **सच्चउरे** ॥८५॥
अइबहुअच्छरिअनिही रहो अ पडहो अ ..... ।
..... [सच्चउ] रे वीरजिणभवणे ॥८६॥
नवनवइलक्ख धणवइ ..... ।
..... थुणि **वीरं जक्खवसहीए** ॥८७॥
तह चिरभवणे बिइए वंदे **चंदप्पहं** तओ तइए ।
पणयजणपूरिआसं **कुमरविहार**म्मि सिरि**पासं** ॥८८॥
बंभेवि-पल्लि-नाणय-देवाणंदेसु वीरनाहस्स ।
पयपउमजुअअलंकिअ - थूभकु(क)ए चेइए वंदे ॥८९॥
मेवाडदेसगामे थुणेमि भत्तीइ नंदिसमसेसे (?) ।
सगडालमंतिकारिअ- जिणभवणे **नायकुलतिलयं** ॥९०॥
सुक्कोसलमुणिसुचरिअ-पवित्तसिहरम्मि **मुग्गिलगिरि**म्मि ।
संपइ **चित्तउडक्खे** चिरतरबहुचेइए थुणिमो ॥९१॥
अब्बुअगिरिवरसिहरे जिणभवणं **विमल**ठाविअं विमलं ।
विमल परिएहिं दसहिं गइंदरूढेहिं कयमहिमं ॥९२॥
अइरम्ममइविसालं महड्ढिअं सुरकयं व पडिहाइ ।
वरजिणभवणं बीअं पिवित्थ सिरि**वत्थुपाल**कयं ॥९३॥
धोअकलधोअनिम्मिअ-पयंडधयदंडमंडिअं उभयं ।
वरसायकुंभगयदंभ-कुंभसोभंतथूभग्गं ॥९४॥
पढमजिणभवण जलणिहि- गब्भे चिंतामणि थुणे **उसभं** ।
अवरवरभवणसुरगिरि-तडि अमरतरुव्व **नेमि**जिणं ॥९५॥
नयणदुगं व सुतारं सिरिघरजुअलं व रयणपडिपुण्णं ।
रेहइ जिणभवणदुगं **अब्बुअगिरि**वरनरिंदस्स ॥९६॥
अब्बुअगिरिवरमूले मुंडथले नंदिरुक्ख अहभागे ।
छउमत्थकालि **वीरो** अचलसरीरो ठिओ पडिमं ॥९७॥
तो **पुन्नराय**नामा कोइ महप्पा जिणस्स भत्तीए ।
कारइ पडिमं वरिसे **सगतीसे वीरजम्माओ** ॥९८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किंचूणा अट्ठारस- वाससया एअपवरतित्थस्स ।
तो मिच्छघणसमीरं थुणेमि **मुंडत्थले वीरं** ॥९९॥
महइमहालयअइसय-निम्मलअच्छेरभूअवरमुत्ती ।
अजिअजिणो तारणगिरि-कुमारनिवठाविओ जयउ ॥१००॥
वायडनयरे मुणिसुव्वयस्स जीवंतसामिपडिममहं ।
वंदे तह **वीरजिणं सतरसंवच्छरसया** जस्स ॥१०१॥
तह **सिरिमालारासण-बंभाणाणंदसिद्धिपुर**पमुहे ।
कासद्दह-अज्जाहर-पुरेसु चिरचेइए थुणिमो ॥१०२॥
गुज्जर-मालव-कुंकुण-मरहट्ठ-सोरट्ठ-कच्छ-पंचाले ।
मरु-संभरि-महुराउरि-हत्थिणपुरि-सोरिअपुराई ॥१०३॥
तिहुअणगिरि-गोवगिरी-कासि-अवंती-मिवाडमाईसु ।
देसेसु जिणे थुणिमो दिट्ठ-अदिट्ठे सुए असुए ॥१०४॥
तह जंबुदीव-धायइ-पुक्खरदीवड्ढ-विजयसतरिसए ।
जे केई गामागर-नग-नगराई अ तहिअं तु ॥१०५॥
जाणि गिहचेइआणि अ जाणि अ जिणभवण तेसु जा पडिमा ।
गुरुआ जा पणधणुसयं लहुआ अंगुट्ठपव्वसमा ॥१०६॥
सुर-नरकय मणि-कंचण-रीरी-रुप्पाइ जाव लिप्पमया ।
छउमत्थेहिं अम(मु)णिअसंखाउ नमामि ता सव्वा ॥१०७॥
जे अइआ तित्थयरा जे उ भविस्सा अणागए काले ।
जे आवि वट्टमाणा ते सव्वे भावओ नमिमो ॥१०८॥
सुरकय-मणुअकयं वा भुवणतिगे सासयं च जं तित्थं ।
तं सयलमिह ठिओ वि हु मण-वयण-तणूहि पणमामि ॥१०९॥
जत्थ जिणाणं जम्मो दिक्खा नाणं च निसिहिआ आसि ।
जइअं च समोसरणं ताओ भूमीउ वंदामि ॥११०॥
एवमसासय-सासय-पडिमा थुणिआ जिणिंद चंदाणं ।
सिरिमं **महिंद-भुवणिंद-चंद-मुणिचंद** थुअमहिआ ॥१११॥
इति श्रीतीर्थमालास्तवनम् ॥ सुश्राविका कुंअरि पठनार्थम् ॥

—x—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्राविकाद्वयव्रतग्रहणविधि ॥

सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

अनुसन्धानना आरम्भना कोई अंकमां 'श्राविकाव्रतग्रहणविधि' नामे एक कृति प्रगट थई हती. तेना जेवी ज बे रचनाओ अत्रे प्रस्तुत छे. खम्भातना ताडपत्र भण्डारनी, क्र. ११६ धरावती, बृहत्संग्रहणीनी प्रत छे. तेमां पत्र ३५-४४मां आ बन्ने पाठ छे. संवत् १२८७ मां अणहिलपुर पाटणनी **बूटडि** नामनी श्राविकाए तथा नागपुरनी **लखमसिरी** नामक श्राविकाए, श्रावकधर्मोचित बार व्रतो उच्चरेलां. ते बन्नेए कया व्रतना कया नियमो स्वीकारेला तथा केवीकेवी छूट राखेली, तेनी नोंध आमां छे. आधुनिक जैनो पण आवां व्रतो ले त्यारे तेनी टीप (नोंधपोथी) लखी राखे छे. १३ मा सैकामां लखाती आवी टीप प्राकृत भाषामां अने ते पण गाथाबद्ध लखाती हशे, ते आ जोतां जाणवा मळे छे. श्राविकाओ पोते अभ्यासी होय अने आम लखती होय एम पण सम्भवित छे, अने तेमना आशयने अनुरूप गाथाओ व्रतदाता गुरुजनो बनावी आपे ते पण शक्य छे. अलबत्त, आ गाथाओ समजवा जेटलो अभ्यास तो ते बहेनोनो होय ज.

बूटडि श्राविकानी नोंध ६१ गाथा प्रमाण छे, अने लखमसिरीनी नोंध ४१ गाथानी छे. अलगअलग गामोनी बे बाईओनी नोंध एकसाथे मळे छे तेनो अर्थ एम पण थाय के बन्ने कोई मिषे एक स्थाने एकत्र थई होय अने साथे व्रत लीधां होय. अथवा तो कोई गुरुजने पोतानी पासे व्रत लेनार आ बन्ने श्राविकाओनी व्रतनोंध पोतानी पोथीमां ऊतारी राखी होय.

१२ व्रतोना नियमोनी आ नोंधमां आवतां विधि-निषेधोनो अभ्यास करनारने ते समयना सामाजिक वातावरण अंगे, धंधा-व्यवसाय तथा रीतरिवाजो अंगे घणुं जाणवा मळे तेम छे. केटलाक शब्दो पण नवा तेम रसप्रद होवानुं जणाय छे.

वर्षो पूर्वे लखी राखेल आ बे रचनाओ अत्यारे तो यथावत् अहीं प्रकट करवामां आवे छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'बूटडि' श्राविकाव्रतग्रहणविधि ॥

नमिऊण महावीरं दंसणमूलं गिहत्थधम्ममहं ।
गिन्हामि सव्वभवकय-मिच्छत्ताविरइपडिकमणो(णा) ॥१॥
अरहंतो मह देवो जावज्जीवं सुरिंदकयसेवो ।
जिणपन्नत्तो धम्मो गुरू जिणाणाठिया साहू ॥२॥
लोइयमिच्छं वज्जे तिविहं तिविहेण भावओ सव्वं ।
दव्वे कुह(जह)सत्तीए दक्खिन्नायंकमाईहिं ॥३॥
धम्मत्थमन्नतित्थे न करे तव-न्हाण-दाण-होमाई ।
जिणवंदणं तिवेलं संखेवेणमा(संखेवेणं ?) करिस्सामि ॥४॥
तंबोल-पाण-भोअण-पाणह-त्थी-भोग-सुयण-निट्ठुवणं ।
मुत्तुच्चारं जूयं वज्जे जिणनाहगभ(ब्भ)हरे ॥५॥
पाणिवह १ मुसावाए २ अदत्त (३) मेहुण ४ परिग्गहे चेव ५ ।
दिसिह भोग ७ दंड ८ समइय ९ देस १० पोसह ११ अतिहिदाणे ॥६॥
जावज्जीवं जीवं थूलं संकप्पियं निरवराहं ।
मणवायाकाएहिं न हणेमि अहं न य हणावे ॥७॥
नर तिरि देहगयाणं गंडोलाईण पाडणे जयणं ।
काहं जलूयलाणे वहचिंता-भास-चिट्ठासु ॥८॥
कन्नागोभूमिगयं नासवहारं च कूडसक्खि च ।
मूलमलीयं दुतिहं वज्जे मोत्तुं सयणकज्जं ॥९॥
खत्तष(ख)णणाइं चोरंकारकरं रायनिग्गहकरं च ।
जं तिन्नं तं मणवयतणूहिं न करे न य करावे ॥१०॥
संघासुकज्ज-लहणिज्ज-दिज्ज-पडिकियविराडववहारे ।
निहि-साहु-सयणसुंके बीए तइए वए जयणा ॥११॥
वज्जे दुतिहं दिव्वं एगतिहं तिरिय-मणुयमेगेगं ।
महुत्तं (? मेहुन्नं) मासं पइ दिनपनरससंतभज्जाए ॥१२॥
खेत्तं वत्थं रुप्पं कणगं धण-धन्न-दुपय-चउप्पायं ।
कुवियं परिग्गहे नव-विहेगतिविहं करेमाणं ॥१३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खेत्ते हलाइनियमो वाडग-घस्हट्ट-चउर-हत्थुम्मि ।
रुप्पपलतीस-कणगे दस, गणिमं धरिमं परिछिज्जं ॥१४॥
रोक्केहिं समं पणगं दम्मसहस्साण लोहधडी ।
चोप्पड-घडपन्नासं तीसं मूडाइ धन्नाण ॥१५॥
लवणं खडिया तूरी वेसण जीराइ संगरि सकूडो ।
कइराइ बहेडाई मुल्लसयं दम्मदुसयाणं ॥१६॥
दुपएग-संतभज्जा अणेक-चउकम्मकारिणो मज्झ ।
दुन्नि सगडाणि दसमे चउप्पया मुत्तु गब्भगए ॥१७॥
कुवियं मह मोक्कलयं कच्चोलय-थाल-चभय-अदुणीया ।
आसण-सिज्जाईयं दम्माणं एगसयमाणं ॥१८॥
निक्खेवोद्धारेहिं धणवुड्ढीए अ णाहथवणीए ।
निहि साहुसक्कदव्वे कहिंचि गहिए वि नो भंगो ॥१९॥
इय विवरिओ वि सव्वो परिग्गहो तिण्हसहसपरिमाणो ।
धारेमि होज्ज अहिओ धम्मे सयणे व दायव्वो ॥२०॥
लहणयलद्धं अड्ढा(द्दा)ण डुल्लयं नियमियं पि जं वत्थुं ।
वरिसंते विक्किसं(स्सं) गहियं च नरिंदविट्ठीए ॥२१॥
बंधव-पुत्ताइगिहे जयणाए मज्झ मोक्कला तत्ती ।
साहम्मियस्स दुत्थिय-कुडंबमइदाणसंठवणं ॥२२॥
अणहिल्लपुरा चउद्दिसि एगतिहा जोयणाण सयमेगं ।
दो उड्ढमहो वीसं धणुहे गच्छामि नइपरओ ॥२३॥
नो पवहणेण जलहिं लाभत्थं जामि भोग-उवभोगे ।
दुविह-तिविहेण मंसं वज्जे एगविह-तिविहेणं ॥२४॥
ओसहअमिस्स-महु-मज्ज-मंखा(ख)ण-सघरणंतकायाणि ।
पंचुंबरिबावीसं दव्वे कोमलफलं वज्जे ॥२५॥
धरणोसूराईयं मुत्तुं निसि असण-खाइमे न जिमे ।
गोरसमीसं विदलं जयणा संसत्तभत्ते य ॥२६॥
अंगोहलणे दसगं मासे जलगग्गरेगपत्तेयं ।
भोगत्थ ण्हाणमेगं करेमि जलगग्गरिदुगेणं ॥२७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कणमाणय दो दिवसे खाइम दो चेव भोयणब्भंगे ।
एगं घय-तिल्लपलं पाणे जलगग्गरी एगा ॥२८॥
अत्थाणयाण नियमो तीसं दव्वाणि च्छिन्निउ सच्चित्ता ।
विगईओ दोन्नि दिणे गणियफलाणं च सयमेगं ॥२९॥
तोलियफल-पलवीसं मवियफलाणं च माणयं एगं ।
एलाई करसतिगं सोलस पत्ताणि पूगदसं ॥३०॥
खंडियपसयविलेवण कुसुमाई एग दम्म मह भोगे ।
पंचतियलिओ दिवसे मुल्लेण(णे?)गाओ दम्मसयं ॥३१॥
सीऊट्टणमहिगं पिह आभरणं तीसकरसमहिगंपि ।
ऊसवकज्जे सिज्जा-दसगं बंभं च दिवसम्मि ॥३२॥
पयरक्खजोअतिन्निउ च्छिपगमाई वि जाइकम्माणि ।
वज्जे खरकम्मम्मि य मुत्तुं भंडार-कोट्ठारं ॥३३॥
सुंकिय-पारिग्गहियं गामे तिहलिक्खयं च अहिगारे ।
रायामच्चाइ(ई)यं वज्जे एगविह-तिविहेणं ॥३४॥
इंगालकम्मनियमो मुत्तुं चलणदुगाइं लत्तीणं ।
करणं कंसाईयं मणिहंडं कारवेमि अहं ॥३५॥
वणकम्मे परिच्छिन्ने तण-फल-कट्ठाइं ध(द)म्मपंचसया ।
वरिसे कणाइदलणे दिणम्मि मह वीस सेईओ ॥३६॥
सगड-तदंगघडावणत्तच्चिक्कणणे[य]वज्जिमो वित्तिं ।
भाडीकम्मे वरिसे मोक्कलयं दम्मपंचसया ॥३७॥
हलखडण-उड्डुसिल-उट्ट-इट्ट-गाराण वोसिरे-वित्ति(त्तिं) ।
लवणाइआगा(ग)राणं खणणेण खणावणेणं च ॥३८॥
दंत-मणि-चमर-चम्मे कत्थूरिय-पूइ-केसि-मोत्ताई ।
अक्ख-मह-संख-सुत्तिय-कवड्डु-सिंगारारे (?) न किणे ॥३९॥
लक्खा-धाहइ-मणसिल-सोहग्गियम... गुलियमाईणि ।
महु मज्ज मंखण वसा रसवाणिज्जंमि वज्जेमि ॥४०॥
केसवणिज्जं वज्जे वरिसे मोत्तुं चउप्पया दस उ ।
धणुह-विस-सत्थ-विस-हल-जंतिणि-हरियालवाणिज्जं ॥४१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्छु-तिल्लजंत-निल्लंछण-दवदाण-सरदहतलागाणं ।
सोसं मज्जाराईपोसं वज्जेमि असईए ॥४२॥
चउविहमणत्थदंडं अवज्झाण-पमाय-हिंस-अप्पिणणं ।
पाउवएसं वज्जे अवज्झाणं अट्ट-रुद्दाणि ॥४३॥
अजरामरत्त-विज्जाहरिंदकीलाइं देसभंगाइं ।
अच्चंतमसंबद्धं म(मु)हुत्तपरओ न चिंतेमि ॥४४॥
किंची जूयं साणाइजोहणं डिंभरूयकीलाइं ।
जलहिंडोलयलीलाइयं च न करे पमायमहं ॥४५॥
दक्खिन्न-भयाभावे खग्गाई हिंसए न अप्पेमि ।
थूलं पाउवएसं वज्जे गोणाइदमणाई ॥४६॥
समइय तह पडिकमणे निरुओ सामग्गिसन्निओ काहं ।
वरिसंमि सयं एगं मासे सज्झायपंचसए ॥४७॥
अट्ठमि-चउदसि-पुन्निम-अमावसा-पज्जुसवण-चउमासे ।
जिणपूया गुरुनमणं तवोविसेसं करिस्सामि ॥४८॥
अन्हाणं बंभवयं विसेसवावारजयणमवि काहं ।
देसावगासियवए दिवसे दस जोअणा गच्छे ॥४९॥
पइदिवसं वावारे वज्जे पुढवि-जल-वाउ-वणकाए ।
चउरो चउरो पहरा तेउक्कायंमि पहरदुगं ॥५०॥
रयणीपोसह चउरो काहं सामग्गिसत्तिओ वरिसे ।
साहुसइ संविभागा चउरो एसणीयभत्तेणं ॥५१॥
सइ विभवे धम्मवए दम्मदुगं देमि हं सुखेत्तेसु ।
तिहिवीसरणे नियमो पुणो करिस्सामि बीयदिणे ॥५२॥
जइ कहवि कसायवसा भंगो पुव्वोत्त होज्ज नियमेसु ।
सज्झाय पंच उ सए एक्कासणयं च काहामि ॥५४॥
जत्थ विसिट्ठो नियमो न इ लिहिओ सोवि एगतिविहेणं ।
नेउ(ओ) दुवालसवए धरेमि सत्तीए जाजीवं ॥५५॥
मुत्तुं रायभिओगं गणाभिओगं बलाभिओगं च ।
देवाभिओग-गुरुनिग्गहं च तह वित्तिकंतारं ॥५६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुब्भिक्ख-धरण-ओसह-चंदग्गह-देसभंग-आयंके ।
अद्धाण-नास-गुरु-संघ-कज्जपमुहं च मुत्तूणं ॥५७॥
अन्नत्थ अणाभोगा सहस्सागारा य महत्तरागारा ।
सव्वसमाहीपच्चय-आगाराउ(ओ)य मह नियमा ॥५८॥
समणोवासगधम्मे आरंभजथूलजीवघायाइ ।
जं किंचि मुक्कलं मु(म)ह तंपि न जा विरइपरिणामो ॥५९॥
सम्मद्दंसणमूलो वयखंधो गुणविसालसाहालो ।
गिहिधम्मकप्परुक्खो सिवसुहफलओ लहुं होउ ॥६०॥
अरहंत-सिद्ध-साहू-सुदिट्ठिसुर-अप्पसक्खिगिहधम्मं ।
बारसचउरासीए बूटडि पडिवज्जए सम्मं ॥६१॥

★

'लखमसिरी' श्राविका व्रतग्रहणविधि ॥

नामिऊण महावीरं दंसणमूलं गिहत्थधम्ममहं ।
गिन्हामि सव्वभवकयमिच्छत्ताविरइपडिकमणो(णा) ॥१॥
अरहंतो मह देवो जावज्जीवं सुरिंदकयसेवो ।
जिणपन्नत्तो धम्मो गुरू जिणाणाठिया साहू ॥२॥
लोइयमिच्छं वज्जे तिविहं तिविहेण भावओ सम्मं ।
दव्वे जहसत्तीए दक्खिन्नाइहिं माईहिं (दक्खिन्नायंकमाईहिं) ॥३॥
धम्मत्थमन्नतित्थे न करे तवन्हाणदाणहोमाई ।
जिणवंदणं तिवेलं संखेवेण वि करिस्सामि ॥४॥
तंबोल-पाण-भोयण-पाणह-त्थीभोग-सुयण-निट्ठुवणं ।
मुत्तुच्चारं जूयं सवसो वज्जेसि (? मि) जिणभवणे ॥५॥
पाणवह १ मुसावाए २ अदत्त ३ मेहुण ४ परिग्गहे चेव ५ ।
दिसि ६ भोग ७ दंड ८ समईय ९ देसे १० पोसह ११ अतिहिदाणं १२ ॥६॥
जावज्जीवं [जीवं] थूलं संकप्पियं निरवराहं ।
मणवायाकाएहिं न हणेमि अहं न य हणावे ॥७॥
नरतिरिदेहगयाणं गंडोलाईण पाडणे जयणं ।
काहं जलोयलाणे वहचिंताभासचिट्ठासु ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कन्नागोभूमिगयं नासवहारं च कूडसक्खिज्जं ।
थूलमलि(ली)यं दुतिहं वज्जे मुत्तुं सयणकज्जं ॥९॥
खत्तक्खणणाइ चोरंकारकरं रायनिग्गहकरं च ।
जं तिन्नं तं मणवय- तणूहिं न करे न य करावे ॥१०॥
संघाइकज्जलहणिज्ज-दिज्जपडिकियविराडववहारे ।
निहिसाहुसयणसुंके बिइए तइए वए जयणा ॥११॥
दुविहतिविहेण दिव्वं एगविहं तिविहओ य तेरिच्छं ।
मेहुणमेगेगविहं मणुयं वज्जेमि परपुरिसं ॥१२॥
धण धन्न खित्त वत्थू रुप्प सुवन्ने चउप्पए दुपए ।
कुविए परिग्गहे नव-विहेगतिविहं करे माणं ॥१३॥
गणिमं धरिमं मेयं पारिच्छिज्जं च दोण्ह सहस्साणं ।
पूगाई खंडाई घयाइ वत्थाई चउहधणं ॥१४॥
रोक्काण दोसहस्सा खारीएगा उ सव्वधन्नाणं ।
लवणस्स तीस सेई दस सेई वेसवाराणं ॥१५॥
खेत्तंमि वायगेगो घरहट्टा दोन्नि रुप्पपलदसगं ।
कणगपल दस सवच्छा गावी वसहा करह दो दो ॥१६॥
एगा छेली तिरिए सेसे वज्जेमि सगडमहमेगं ।
कम्मकरदुगमणंकं कुवियंमी एगदम्मसयं ॥१७॥
दम्मसहस्सो सव्वो परिग्गहो तत्तिपुत्तपईगेहे ।
नियमियलहणयलद्धं डुल्लं विक्केमि वरिसंतो ॥१८॥
नो पवहणेण गच्छे **नागपुराऊ** चउदिसिंमि [अहं]।
जोयणसयमेगेगं दो उड्ढमहो धणुह चत्ता[रि]॥१९॥
दुतिहं मंसं वज्जे एगतिहमणोसहं च महुमाई ।
धरणाइ मुत्तु रयणी-भत्तं कोमलफलं वज्जे ॥२०॥
बावीसं दव्वाई अणंतकायाइ गोरसा मीसं ।
विदलं वज्जेमि अहं नत्ते जयणाउ संसत्ते ॥२१॥
कणमाणतिगं नेहे पलमेगं मज्झ भोयणब्भंगे ।
जलगग्गरेगपाणे अत्थाणय सेसु चउविगई ॥२२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पणसच्चित्ता त्तीसं दव्वाई गणियफलसयं एगं ।
मवियाण दुन्नि माणा दुउच्छुलट्ठी य दुगवीसं ॥२३॥
सोलस पन्ना खंडिय पसई दिवसंमि सत्त तियलिओ ।
कणगपलाणयदसगं वीसं अंगोहली मासे ॥२४॥
ण्हाणतिग कुंकुमाई भोगे इगदम्म खट्टदसगं मे ।
एलाइपलं दिवसे पलाणि दस तोलियफलाणं ॥२५॥
वज्जे वि जाइकम्मं खरकम्मं तह य मासमज्झंमि ।
कम्मादाण तु भोगे मुक्कलया दम्म मे वीसं ॥२६॥
वज्जे अणत्थदंडे अजरामरमाइचरिमवज्झाणं ।
जूयंदोलज्झिल्लण-विरुद्धविगहापमायं च ॥२७॥
पइदिवसं वावारं वज्जे पुढविजलवाउवणकाए ।
चउरो चउरो पहरा तेउक्कायंमि पहरदुगं ॥२८॥
दक्खिन्नभयाभावे खग्गाई हिंसए न अप्पेमि ।
थूलं पावुवएसं वज्जे गोणाइदमणाई ॥२९॥
सामाइय तीस वरिसे दो पोसह वंदणाण सद्धीया ।
सज्झाइसहसदसगं जोयणदसगं दिणे जामि ॥३०॥
अट्ठमिचउदसि चउमास पज्जुसवणेसु सति सब्भावे दुगभत्तं । (?)
अन्हाणं बंभवयं न करे चीराइधुअणाइं ॥३१॥
सम्ममसंभरणे तह तिहीणणंतरतिहीसु मे नियमा ।
वरिसेहं सत्तीए दम्मद्धं देमि जिणधम्मे ॥३२॥
अट्ठदसपावट्ठाणे चिरकय अहिगरण सव्वमाहारं ।
मज्झिमखंडा बाहिं तिविहं तिविहेण मे चत्तं ॥३३॥
जइ कहवि पमायवसा भंगो पुव्वुत्त होज्ज नियमेसु ।
सज्झाय पंच उ सए एकासणयं च काहामि ॥३४॥
जत्थ विसिट्ठो नियमो न य लिहिओ सोवि एगतिविहेणं ।
नेओ दुवालसवए धरेमि सत्तीए जाजीवं ॥३५॥
मोत्तुं रायभिओगं गणाभिओगं बलाभिओगं च ।
देवाभिओग-गुरुनिग्गहं च तह वित्तिकंतारं ॥३६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुब्भिक्ख धरणऊसह चंदग्गह देसभंग आयंके ।
अद्धाणनास गुरु संघकज्जपमुहं च मुत्तूण ॥३७॥
अन्नत्थ अणाभोगा सहसागारा य महत्तरागारा ।
सव्वसमाहीपच्चयआगाराओ य मह नियमा ॥३८॥
समणोवासगधम्मे आरंभजथूल(जी)वघायाइं ।
जं किंचि मोक्कलं मह तं पि न जा विरयपरिणामो ॥३९॥
सम्मद्दंसणमूलो वयखंधो गुणविसालसाहालो ।
गि[हि]धम्मकप्परुक्खो सिवसुहफलओ लहुं होउ ॥४०॥
अरहंतसिद्धसाहू - सुदिट्ठिगुरुअप्पसक्खिगिहिधम्मो ।
बारहसत्तासीए पडिवज्जइ **लखमसिरी** सम्मं ॥४१॥
॥ छः ॥ शुभं भवतु सकलसंघस्य ॥

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीसिद्धचक्रयन्त्रोद्धारविधि - व्याख्या ॥

सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

श्रीसिद्धचक्रयन्त्र ए जैन धर्मनुं एक विशिष्ट आराध्य यन्त्र छे. पांच परमेष्ठी अने ४ ज्ञानादि गुणो एम नव पदोनां तात्त्विक अने तान्त्रिक संयोजनथी निर्मित आ यन्त्रनी विशिष्ट-विस्तृत उपासनानी प्रक्रिया जैन संघमां आजे पण प्रवर्तमान छे. आ यन्त्रनी उपासनानी ऐतिहासिक विगतो माटे इतिहासवेत्ता पं. श्रीकल्याणविजयजी कृत 'निबन्धनिचय'नो आ विषयनो लेख जोवो जरूरी छे.

सिद्धचक्रनो सीधो सम्बन्ध श्रीपाल-मयणानी कथा साथे जोडायेलो छे. आ बन्ने पात्रोनी कथा, सर्व प्रथम, नागपुरीय बृहत्तपागच्छना श्रीरत्नशेखरसूरिए रचेल 'सिरिसिरिवालकहा' (१५मो शतक) मां उपलब्ध थाय छे. ते पूर्वेना श्वेताम्बरसंघना कोई पुरुषे आ बे पात्रो विषे कांई लख्युं होय अथवा आगमोमां ते पात्रोनो कोई उल्लेख होय तेवुं जाणवामां आवतुं नथी. जैनो द्वारा थता नित्यपाठना सूत्ररूप 'भरहेसर'नी सज्झायमां पण आ बेनां नामो गेरहाजर ज छे.

श्रीरत्नशेखरसूरिए 'सिरिसिरिवालकहा'मां श्रीपाल-मयणानी कथा रसप्रद रूपे गुंथी छे. तेमां ज, प्रसंगोपात्त, सिद्धचक्रयन्त्रनुं स्वरूप पण तेमणे दर्शाव्युं छे. ते वर्णननी मुख्य १२ गाथाओ छे, जेनो अर्थबोध जैन तन्त्रविद्याना जाणकारोने ज थई शके तेवी ते गहन छे. ते अर्थो तथा उपासनाविधिना आम्नायनुं रहस्योद्घाटन, कर्ताना ज शिष्य आचार्य श्रीचन्द्रकीर्तिसूरिए (१६मो शतक) ते गाथाओनी सरल अने सुगम व्याख्या करीने करेल छे.

आ व्याख्या प्रमाणेनी उपासनाविधि साथे वर्तमानमां प्रचलित उपासना(पूजन) पद्धतिने सरखाववामां आवे तो महदंशे साम्य जोवा मळे छे. अथवा बीजी रीते एम कही शकाय के आ व्याख्या द्वारा उपलब्ध थती पद्धतिनो विनियोग प्रवर्तमान पूजनविधिमां करी शकाय, अने ते रीते केटलीक प्रवेशेली विकृतिओने दूर करी शकाय.

बे पत्रनी, सम्भवतः १७मा सैकामां लखायेली, निजी संग्रहनी एक प्रतिना आधारे आ सम्पादन करवामां आव्युं छे. आकृतिओ प्रतिलेखके ज आलेखी बतावेल छे. गा. ५नी व्याख्यामां निर्दिष्ट 'लब्धिकल्प'नो सम्बन्ध सूरिमन्त्रकल्प

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साथे होवानुं सम्भवित छे.

*

ॐ नमः सिद्धं ॥

गयणमकलिआयंतं उड्ढाहसरं सनायबिंदुकलं ।
सपण[व]क्रोंवबीया-णाहय मंतसरं सरह पीढम्मि ॥१॥

अथ ग्रन्थकारो द्वादशभिर्गाथाभिः श्रीसिद्धचक्रोद्धारविधिमाह । तत्रेयमादिगाथा-**गयण**मित्यादि । अत्र गगनादिसंज्ञा मन्त्रशास्त्रेभ्यो ज्ञेया । तत्र 'गगन' शब्देन 'ह' इत्यक्षरमुच्यते । **पीढ**मिति मूलपीठे यन्त्रस्य सर्वमध्ये 'ह' इत्यक्षरं स्मरत । इह च स्मरणमेवाऽधिकृतम् । स्मरणस्याऽशक्यत्वे पदस्थध्यानसाधनार्थं मनोज्ञद्रव्यैर्वहिका-पट्टादौ लिखनमपि पूर्वाचार्यैराम्नातम् । एवमन्येष्वप्यग्रेतनगाथागणोक्तेषु बीजेषु ध्यानादिकं स्वयमूह्यम् । तत्रादौ हकाराक्षरं लेख्यमिति प्रकृतम् । तत् कीदृशमित्याह - **अकलिआयंत**मिति । अस्य-अकाराक्षरस्य कलिका-व्याकरणसंज्ञामयी वक्रा 'ऽ' इत्यकाररूपी(पा) । तया आचान्तं-सहितं-आदौ अकलिकया युक्तम् । ततो 'ऽह' इति भवति । पुनर्गगनबीजं कीदृक् ? **उड्ढाहसरं** ति । उद्ध्वंधः सरं - सह रेण- रकाराक्षरेण वर्तते इति सरम् । हकारस्योद्ध्वंमधश्च रो न्यस्यत इत्यर्थः । ततो 'ऽर्ह (ह्रीं)' इति जातम् । पुनः कीदृशं गगनम् ?-**सनायबिंदुकलं** ति । नाद इत्यर्द्धचन्द्राकारोऽनुनाशिकः, तन्न्यासः । बिन्दुकला च पूर्णोऽनुस्वारः । ततो नादश्च बिन्दुकला च-एताभ्यां सहितम् । ततो 'ऽह्रीं' इति जातम् । पुनः कीदृशम् ? - **सपणव**त्ति । सप्रणवबीजानाहतम् । प्रणव- ॐकारः, बीजं - ह्रींकारः, अनाहतं च कुण्डलाकारं ◎ एतादृशं बीजम् । ततश्च द्वन्द्वः, तैः सहितम् । अत्राऽऽम्नायः -

ऽह्रीं मिति बीजं ॐकारोदरे न्यसेत् । एतच्च बीजद्वयं ह्रींकारोदरे न्यसेत् । ततश्च ह्रींकारस्येकारस्वरात् रेखां पश्चाद् वालयित्वा द्विःकुण्डलाकारेणाऽनाहतेन तद्बीजत्रयमपि वेष्टयेत् । तन्न्यासः ◎ । पुनः कीदृक् ? - **अंतसरं** ति । अन्ते स्वरा-मातृकोक्ताः 'अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः' इति लक्षणाः षोडश यस्य तदन्तस्वरम् । पूर्वोक्तस्य सर्वतः स्वरान् न्यसेदित्यर्थः । इत्येता[व]त् कर्णिकायां ध्यायतेत्यर्थः ॥ इति प्रथमगाथा ॥१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

झायह अडदलवलये सपणवमायाइए सवाहंते ।
सिद्धाइए दिसासुं विदिसासुं दंसणाइ(ई)ए ॥२॥

अथ **झायह** त्ति । इति पीठं लिखित्वा तत्पार्श्वे वृत्तं मण्डलं लिखेत् । तदुपरि अष्टदलकमलाकारं वलयं लिखेत् । तत्राऽष्टदलवलये चतुर्दिक्पत्रेषु प्रणव-मायादिकान् स्वाहान्तान् सिद्धादिकान् चतुर्थीबहुवचनान्तान् **इत्याम्नायः** । ईदृशान् ध्यायेत् । तत्र प्रणवः-ॐकारो, माया-ह्रींकारः, तावादौ येषां ते तान् ।

ॐ ह्रींसिद्धेभ्यः स्वाहा । पूर्वस्याम् । **ॐ ह्रीं**आचार्येभ्यः स्वाहा । दक्षिणस्याम् । **ॐ ह्रीं** उपाध्यायेभ्यः स्वाहा । पश्चिमायाम् । **ॐ ह्रीं** सार्वसाधुभ्यः स्वाहा । उत्तरदिग्दले लिखेत् ॥ तथैव विदिक्षु दर्शनादीनि चत्वारि पदानि क्रमेण लिखेत् — **ॐ ह्रीं**दर्शनाय स्वाहा । आग्नेयकोणे । **ॐ ह्रीं** ज्ञानाय स्वाहा । नैर्ऋत्याम् । **ॐ ह्रीं** चारित्राय स्वाहा । वायवे(व्याम्) । **ॐ ह्रीं** तपसे स्वाहा । ईशानकोणे ॥ एवमष्टदलं प्रथमवलये ॥२॥

बीयवलयम्मि अडदिसि दलेसु साणाहए सरह वग्गे ।
अंतरदलेसु अट्ठसु झायइ परमिट्ठिपढमपए ॥३॥

बीयवलयम्मित्ति गाथा । प्रथमवलयबाह्यतो मण्डलाकारं षोडशदलं न्यसेत् । तत्र द्वितीयवलयेऽष्टस्वेकान्तरितदिग्दलेषु सानाहतान् - अनाहतबीजसहितान् अष्टौ वर्गान् - 'अ-क-च-ट-त-प-य-श' रूपान् क्रमेण लिखेत् । तत्र प्रथमवर्गे षोडश वर्णाः । कवर्गादिषु पञ्चसु प्रत्येकं पञ्च पञ्च वर्णाः । अन्तिमवर्णद्वये प्रत्येकं चत्वारो वर्णाः । **अंतर**त्ति । अष्टसु वर्गाणामन्तरदलेषु परमेष्टिप्रथमपदान् (नि) ध्याय(ये)त् । अष्टस्वेव प्रत्येकं 'ॐ नमो अरिहंताणं' इत्येकमेव पदं लिखेदित्यर्थः । एवं द्वितीयवलए (ये) ॥३॥

तई(इ)यवलए वि अडदिसि दिट्ठंत अणा(णा)हएहिं अंतरिए ।
पायाहिणतित्थ(य?)पंतिआहिं झाएह दलट्ठिएएए ॥४॥

तईयवलयम्मित्ति । तृतीयवलयेऽष्टसु दिक्षु अष्टावनाहतान् लिखेत् । तांश्च त्रिपङ्क्तिव्यापकान् लिखेत् । द्वयोर्द्वयोरन्तरे द्वे द्वे लब्धिपदे, एवमष्टस्वप्यन्तरेषु षोडश लब्धिपदानि प्रथमपङ्क्तौ । एवं षोडशैव द्वितीयपङ्क्तौ । एवमेव च तृतीयपङ्क्तौ । प्रादक्षिण्येन त्रिभिः पङ्क्तिभिरष्टचत्वारिंशल्लब्धिपदानि ध्यायत ॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

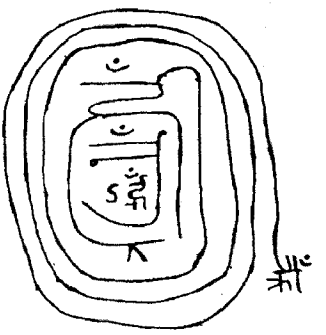

ते पणवबीय अरिहं नमो जिणाणं ति एअ साहीय ।
अडयालीसं णेया सम्मं सुगुरूवएसेणं ॥५॥

ते पणवत्ति गाथा । ते इति प्राकृतत्वान्नपुंसकस्य पुंस्त्वम् । तानि लब्धिपदानि प्रणव-**ॐ**कारो मायाबीजं-**ह्रीं**कारोऽर्हमिति सिद्धबीजम् । एतत्पूर्वकं 'नमो जिणाण' मिति पदम् । **ॐ ह्रीं** अर्हं नमो जिणाणं' इत्येवमादीन्यष्टचत्वारिंशत्संख्यानि सम्यक् सुगुरूपदेशेन ज्ञेयानि । एतेषां नामानि माहात्म्यानि च **लब्धिकल्पा**दवसेयानि । इह त्वाराधनविधिना पुस्तकलिखने दोष इति न लिखितानि ॥५॥

तं तिगुणेणं माया-बीएणं सुद्धसेअवन्नेणं ।
परिवेढिऊण परिहिइ तस्स गुरुपाउए नमह ॥६॥

तं तिगुणेणं ति गाथा । तत् - पीठादिलब्धिपदान्तं त्रिगुणेन शुद्धश्वेतवर्णेन मायाबीजेन-**ह्रीं**कारेण परिवेष्टयित्वा तस्य परिधौ गुरुपादुका नमत । अत्रायं भावः-सर्वयन्त्रस्योर्द्ध्वं **ह्रीं**कारं विलिख्य तस्येका[रा]त् सर्वयन्त्रपरिक्षेपरूपां रेखां त्रिर्वालयित्वा चतुर्थरेखार्द्धप्रान्ते **क्रों** इत्यक्षरं लिखेत् । तस्य च परिधौ गुरुपादुका लिखेत् ॥६॥

ता एवाऽऽह-

अरिहं-सिद्ध-गणीणं गुरु-परमा-ऽदिट्ठ-णंत-सुगुरूणं ।
दुरणंताण गुरूणं सपणवबीआउ ताओ अ ॥७॥

अरिहंसिद्धगणीणमिति गाथा । अर्हतां पादुकाः १, सिद्धानां २, गणीणंति आचार्याणां ३, गुरूणां ४, परमगुरूणां ५, अदृष्टगुरूणां ६, अनन्तगुरूणां ७, **दुरणंताणं**ति अनन्तानन्तगुरूणां ८, इत्येवमष्टानामपि ताः पादुकाः सप्रणव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीजाः- ॐ ह्रींयुक्ताः- ॐ ह्रीं अर्हत्पादुकाभ्यो नमः १ इत्यादिकास्तत्र लिखेदित्यर्थः ॥७॥

रेहादुगकयकलसा-यारामिअमंडलं व तं सरह ।
चउदिसि विदिसि कमेणं जयाइ-जंभाइकयसेवं ॥८॥

रेहादुगत्ति । रेखाद्विकेन यन्त्रार्द्धभागाद् वाम-दक्षिणनिर्गतान्योन्यग्रथित-प्रान्तरेखाद्विकेन कृतं यत् कलशाकारममृतमण्डलं तदिव स्मरत कलशाकारं लिखेदित्यर्थः । किंविशिष्टं यन्त्रम् ?, **चउदिसि**त्ति । चतुर्दिक्षु विदिक्षु च क्रमेण जयादिभिश्चतसृभिः जया १ विजया २ जयन्ती ३ अपराजिता ४भिः तथा जम्भादिभिः जम्भा १ थम्भा २ मोहा ३ अन्धाभिः ४ कृता सेवा यस्य तत् । तत्र जयादिकाश्चतस्रः क्रमेण पूर्वादिदिक्षु जम्भादिकाश्चाग्ने(ग्ने)यादिविदिक्षु लिखेत् ॥८॥

सिरिविमलसामिपमुहा-हिट्ठायगसयलदेवदेवीणं ।
सुहगुरुमुहाउ जाणिअ ताण पयाणं कुणह झाणं ॥९॥

सिरिविमलसामित्ति गाथा । श्रीविमलस्वामीतिनाम्ना श्रीसिद्धचक्राधिष्ठायक-स्तत्प्रमुखा येऽधिष्ठायका देवा देव्यश्चक्रेश्वर्याद्यास्तासां ध्यानं सुगुरुमुखाद् ज्ञात्वा **ताण**त्ति-तत्सम्बन्धिनां **पयाणं** ति- मन्त्रपदानां ध्यानं कुरुत । एतेषां नामानि कलशाकारस्योपरि सर्वतो लिखेत् । 'ॐ श्रीविमलस्वामिने नमः' इत्यादि लिखेत् ॥९॥

तं विज्जादिवि-सासण-सुर-सासणदेविसेविअदुपासं ।
मूलगहं कंठनिहिं चउपडिहारं च चउवीरं ॥१०॥
दिसिवाल-खित्तवालेहिं सेविअं धरणिमंडलपईवं ।
पूअंताण नराणं नूणं पूरेइ मणइट्ठं ॥११॥

तं विज्जादिवित्ति गाथा । तथा **दिसिवालखित्तवालेहिं**ति गाथा-युग्मस्य व्याख्या । तत् सिद्धचक्रं-कर्तृ, पूजयतां-नराणां नूनं-निश्चितं मनइष्टं-मनसोऽभीप्सितं पूरयति । कथम्भूतं तत् ?, विद्यादेव्यः षोडश रोहिण्याद्याः । शासनसुरा गोमुखयक्षाद्याः । शासनदेव्यश्चक्रेश्वर्याद्याः । ततो विद्यादेवीभिः शासनसुरैः शासनदेवीभिश्च सेवितौ द्वौ पार्श्वौ वाम-दक्षिणौ यस्य तत् । पुनः कीदृशम् ?,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूलगहंति । मूले-कलशस्य मूलदेशे ग्रहाः - सूर्यादयो यस्य तत् । तथा कण्ठे-गलस्थाने निधयो नव नैसर्प्पकाद्याः समयप्रसिद्धा यस्य तत् । तथा चत्वारः प्रतिहारद्वारपालाः कुमुदा १ ऽञ्जन २ वामन ३ पुष्पदन्ताख्या ४ यस्य तत् । तथा चत्वारो वीरा माणिभद्र १ पूर्णभद्र २ कपिल ३ पिङ्गलाख्या ४ यस्य तत् ईदृशम् । ततो विद्यादेव्यः षोडशापि '**ॐ ह्रीँ** रोहिण्यै नमः, **ॐ ह्रीँ** प्रज्ञप्त्यै नमः' इत्यादि परितश्चक्रं लिखेत् । शासनसुरा(रां)श्च चक्रस्य दक्षिणदिशि लिखेत् । शासनदेवी (वीः) वामदिशि लिखेत् । तथा चक्रस्य मूले पतद्ग्रहाधः '**ॐ** आदित्याय नमः' इत्यादिनवग्रहाणां नामानि लिखेत् । कण्ठे च वाम-दक्षिणतो नवाऽपि कलशान् कृत्वा तदुपरि '**ॐ** नैसर्प्पकाय नमः' इत्यादि लिखेत् । तथा चतसृषु दिक्षु क्रमेण कुमुद १ अञ्जन २ वामन ३ पुष्पदन्तान् ४ लिखेत् । तथा माणिभद्रादींश्चतुरो वीरानप्येवं दिक्षु लिखेत् ॥१०॥

दिसिवालखित्तवालेहिं ति द्वितीया गाथा । दिक्पालैर्दशभिः इन्द्रा-ऽग्नि-यम-नैर्ऋति-वरुण-वायु-कुबेरे-शान-ब्रह्म-नागनामभिः क्षेत्रपालेन च सेवितम् । ततो(त्र) दशसु दिक्पालेष्वष्टौ दिक्पालान् पूर्वादिक्रमेण लिखेत् - **ॐ** इन्द्राय नमः' इत्यादि । ऊर्द्ध्वं तु '**ॐ** ब्रह्मणे नमः', अधः '**ॐ** नागाय नमः' । निजदक्षिणभागकोणे '**ॐ** क्षेत्रपालाय नमो' लिखेदिति गाथाद्वयार्थः । तथाप्यस्य लिखने सम्यग्विधिश्चाऽस्याऽऽम्नायविन्मुखाद् यथालिखितचक्राद्वाऽवसातव्यः ॥११॥

एयं च सिद्धचक्कं कहिअं विज्जाणुवायपरमत्थं ।
नाएण येण सहसा सिज्झंति महंतसिद्धीओ ॥१२॥

एयं चेत्यादिगाथा । कण्ठ्या । नवरं **विद्यानुवादो** नाम नवमं पूर्वं, तस्य परमार्थरूपं रहस्यभूतमित्यर्थः ॥१२॥

इति श्रीमन्नागपुरीयतपागच्छनायक सुविहितशिरशेखर श्रीरत्नशेखरसूरि-विरचितायां श्रीश्रीपालराजा(ज)कथा[यां] सिद्धचक्रयन्त्रोद्धारगाथाद्वादशकस्य व्याख्या संक्षेपतो व्यधायि भ० श्रीचन्द्रकीर्तिसूरिभिः ॥ छ ॥

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परम योगीराज आनन्दधनजी महाराज अष्टसहस्त्री पढ़ाते थे ।

म० विनयसागर

पूज्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरिजी म. ने 'आनन्दघन पदसंग्रह भावार्थ' और मोतीचन्द गिरधरलाल कापड़िया ने 'आनन्दघनजी ना पदो भाग १-२' में श्री आनन्दघनजी महाराज के जीवन चरित्र के सम्बन्ध में विस्तार से विवेचन किया है । अतः उस सम्बन्ध में कुछ भी लिखना चर्वितचर्वण या पिष्टपेषण मात्र होगा । दोनों प्रसिद्ध लेखकों ने यह तो स्वीकार किया ही है कि पूज्य आनन्दघनजी महाराज का दीक्षा नाम लाभानन्द, लाभानन्दी या लाभविजय था और मेड़ता में निवास करते थे । पिछली अवस्था का उनका नाम आनन्दघन था, किन्तु इन लेखकों ने आनन्दघनजी को वे तपागच्छ के थे इस प्रकार का प्रतिपादन किया है ।

इनके मन्तव्यों का समाधान करते हुए स्वर्गीय श्री भँवरलालजी नाहटा ने आनन्दघन चौवीसी, (विवेचनकार-मुनि सहजानन्दघन, प्रकाशक- प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर और श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, हम्पी सन् १९८९) की प्रस्तावना (अवधूत योगीन्द्र श्री आनन्दघन) में गहनता से विचार किया है । और प्रमाणपुरस्सर यह प्रतिपादित किया है कि श्री आनन्दघनजी महाराज खरतरगच्छ के थे ।

इसी प्रस्तावना के पृष्ठ ३४ में उन्होंने मेरे नामोल्लेख के साथ लिखा है :-

"श्री पुण्यविजयजी महाराज वहाँ से बीकानेर पधारे थे और उपाध्याय विनयसागरजी को उनके साथ अभ्यास हेतु भेजा गया था, वे उनके साथ काफी रहे थे । मुनिश्री ने वह पत्र विनयसागरजी को दे दिया था जो उन्होंने अपने संग्रह-कोटा में रखा था । अभी उनके पर्युषण पर पधारने पर वह पत्र उनके संग्रह में ज्ञात हुआ, पर अभी खोजने पर नहीं मिला तो भविष्य में खोज कर मिलने पर प्रकाश डाला जा सकेगा । पर यहाँ पर इस अवतरण पर विस्तृत प्रकाश डालने का प्रयत्न करता हूँ ।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री नाहटाजी का यह लिखना पूर्ण सत्य है कि दो वर्ष तक मैं उनके सामीप्य में रहा, चातुर्मास भी किए । सन् १९५२ में अहमदाबाद में आगम प्रभाकर मुनिश्री पुण्यविजयजी से उक्त पत्र मैंने प्राप्त किया जो कि मेरे संग्रह में सुरक्षित है । श्री नाहटाजी के लिखने पर मैंने इस पत्र को बहुत ढूंढा । अनेक बार सूचियों का अवलोकन किया किन्तु वह पत्र मेरी दृष्टि से ओझल ही रहा । किसी प्रति के साथ संलग्न हो गया था । संयोग से कुछ दिन पूर्व ही यह महत्त्वपूर्ण पत्र मुझे प्राप्त हो गया । उसकी अविकल प्रतिलिपि संलग्न है :-

स्वस्ति श्रीभरवृद्धिसिद्धिविधये नत्वा सतत्त्वावलिं,
श्रीपार्श्वं प्रणतामरेन्द्रनिचयं मात्रा सनाथं मुदा ।
दुष्टेच्छिष्टकुच्चिष्टकामठहठभ्रंसप्रबद्धादरं,
हस्त्यारूढमनल्पलोकनिवहैरालोकितं सादरम् ॥१॥

कामः कामितपौरलक्ष्यनयना या निर्ममे स्वाङ्गनाः,
स्वस्यामोघसुशस्त्रगेहमबला यस्यां वराङ्गप्रभाः ।
कर्णे चोच्छलदशुंमालकनकप्राजिष्णुसत्कुण्डल-
चक्रैश्चञ्चलनेत्रसाङ्गनिवहैर्हारैश्च पाशप्रभैः ॥२॥

लक्ष्मीवासितया जितासुरपुरी लङ्का च वैषम्यतो,
यत्र श्राद्धजनो विशेषनिपुणो दानप्रबद्धादरः ।
भक्तस्तीर्थपतौ रतौ जिनमते नित्यं सुशीलाशयः,
सिद्धान्ते धृतधीरलं विरमितः श्रीसदुरौ भक्तिमान् ॥३॥

तस्यां सूर्यपुरी पुरिप्रतिनिधौ श्रीस्वर्गपुर्या रया-
च्छ्रीपूज्यप्रवरांह्रिपद्मयमलैः पूताध्वकायामलम् ।
गङ्गानीरसुचन्द्रचन्द्रसुदधिस्तम्बेरमाधीश्वरा-
तिश्वेतामलकीर्त्तिकीर्तनबलात्श्वेतीकृतायां जनैः ॥४॥

यद्वक्त्रप्रवरप्रभाभिरभितः सन्तर्जितश्चन्द्रमा-
नष्ट्वा संविदधे नभस्यतितरामभ्रभ्रमद्गह्वरे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूरिश्लक्ष्णजटावलौ निवसनं गौरीशितुर्मूर्द्धनि,
सूर्ये सौर्यनिरस्तसर्वखचराद्दीप्रप्रदीप्त्यावलौ ॥५॥

सत्काव्यामृतकारिताभिरभितः काव्यो जितः स्वर्गतो-
ऽनेकानेकविवेकशास्त्रनिकराभ्यासात् पुनः स्वर्गुरुः ।
व्याकर्णार्णवतर्कतर्कनिपुणाच्छन्दःपवित्राननान्,
सत्काव्यामृतपानपीनहृदयान् सुद्धार्थविज्ञान्मुदा ॥६॥

व्यक्तालङ्कृतिशास्त्रसाधनमतीन् साधुक्रियासाधकान्,
कुर्वाणान् वरधर्ममार्गसुविधौ बद्धादरान् श्रावकान् ।
तान् श्रीश्रीजिनचन्द्रसूरिसुगुरून् सत्साधुसंसेवितान्,
नत्वा विज्ञपयत्पदः सुवचनं **श्रीमेड़तातः** पुरात् ॥७॥

शिष्याः पाठकवर्य**पुण्यकलसाः** भक्त्या प्रणम्यात्मनः,
सद्विद्वज्ज्**यरंग**नाममुनिभि**स्त्रैलोक्यचन्द्रे**ण च ।
युक्ता हर्षवशात् कृताञ्जलिपुटाश्चारित्रचन्द्रादिभिः,
सानन्दं सह तोषपोषविधिभिः सस्नेहमानन्दतः ॥८॥

सौख्यं भूरितरं यशो गुरुतरं पूजाप्रसादादिह,
भावत्कं सततं मनस्यतितरामीहामहे भूरिशः ।
सोत्कर्षं सह जैनधर्मगुरुता सत्पारणाभिस्तपः-
पूरैद्वार्दशकप्रभावनिकया चाराधितः पर्वराट् ॥९॥

चिन्तास्मद् हृदि तावदुत्कटतरा प्रादुर्बभूवेदृशी,
सर्वस्मिन्नपि देश आगतमहो पत्रं हि नो नान्तके ।
किं वा कारणमत्र चित्रकलितं नो कोपि कोपः पुनः,
श्रीपूज्या गुरवः प्रभावगुरवः शिष्या वो वा वयम्(?) ॥१०॥

अस्माकं ह्युपरिकृपागुरुतरां पूर्वं ह्यभून्नाधुना,
युष्मद् भूरिवयो गदारुसुकरः पत्रात्पवित्रात्क्षिणात् ।
चारुश्रावणमास आसु लिखिताद्राकादिने सुन्दरे,
नात्रोभूत्करपत्रतः शुभवतां प्राप्ताच्च तस्यायतः ॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आविर्भूत इवार्कमण्डलकरे स्थातुं कुतोलं तमः,
गर्जत्तोयदशामलाभ्रपटलान्ते दीप्रदाघावलिः ।
जिह्वायुग्मवरस्युरत्फणगणव्यालास्यवाकृष्णवेः,
शुद्धं श्रीगुरुभिर्मुदा कृतकृपैर्देयं पवित्रं दलम् ॥१२॥

मासे चास्वनि नाम्नि चोज्वलतरे पक्षे वरे वासरे,
द्वादश्यां प्रवरे च सुन्दरतरे वारे द्विजाधीशकम् ।
अत्रत्यः सकलोपि श्राद्धनिचयः सद्भावभिन्नाशयः,
वन्दत्यन्वहमाशु तत्र भवतां शिष्याश्च वन्द्या मुहुः ॥१३॥

धीमान् धीधरवान् धराधिधरवान् धीरत्ववान् ध्यानवान्,
ज्योतिर्वान् यतिवान् यतित्वगुणवान् जेतृत्ववान् निस्तनोः ।
नन्द्याच्चन्द्रगणाधिपश्चिरमसौ **श्रीजैनचन्द्राभिधः**,
आशीर्नित्यमलं ददाति प्रमुद**श्चारित्रचन्द्राभिधः** ॥१४॥

॥ तथा श्रीजीनइ पत्र ३ आगइ मुंक्या छइ तीणथी सर्वसमाचार अवधारेज्यो । अपरं शिष्य दो कुटेवा पड्या छइ, अतः परं श्रीजीनी कृपाथी सुनजरथी स्वामी धर्म गुण थी समाधि थई । श्रीसंघइ घणी परिचर्या कीधी धन्य श्रावक श्राविका छइ ।

अपरं अत्र नइ संघइ श्री पूज्यजीनइ वीनती लिखीछइ ते जउ श्रीपूज्यजी नइ दाई आवइ । अत्र नउ आदेश द्यउ, तउ बि क्षेत्र देज्यो मेडता नागौर ना । पणि कहवा पड्या क्षेत्र स्वरूप पूजजी मालूम छइ । पूज्यजीरइ प्रसादै पारावणउ घणउ ही आवइ छइ । परं हवि ष चीतरउ ग्रन्थि सत्क । ईए वास्तइ श्रीजीनइ वीनती लिखीछइ, अत्रनउ ऽऽदेश द्यउ, तउ श्रीनागोर नउ पिणि कृपा करेज्यो, ए अरज छइ । पछइ जिम प्रभुजीनइ विचार आवइ ते प्रमाणा । अपरं समाचार एक अवधारिज्यो । रजत ४ चो. खेतानइ दिया हुता ते ऽजी पिण ते चढ़ाव्या नथी । थे जाणउ छउ । जिस्यउऽऽहार वमवउ दोहिलउ अजोग्य दल वाडउ बोलिवा जोग्य नहीं । अपरं वली कहइ छइ खेतउ श्री पूज्यजीनइ लिखउ रजत ४ मुंकिद्यई तीनिरइ वास्तइ श्रीजीनइ म्हे कह्या छइ । तीए वास्तइ कदाचि श्रीजी मुंकउं तउ श्रीसंघनई मुंकेज्यो । अपरं वा श्रीपूजजी उरइ तीण नइ भलाव्या तउ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूझता ऽऽचमन करिस्यइ, पूज्यजी मालूमछइ, हुं सुं लिखूं थोड़इ लिख्यइ घणउ अवधारेज्यो । वलतां समाचार तुरन्त प्रसाद करावेज्यो ।

पं. जयरंग, पं. तिलकचन्द्र, पं. चारित्रचन्द, पं. सुगुणचन्द, चि. मानसिंह, चि. बालचन्द .... वन्दना अवधारेज्यो ।

॥ पं. सुगुणचन्द अष्टसहस्त्री **लाभाणन्द** आगइ भणइ छइ ऽद्धरइ टाणइ भणी । घणउ खुसी हुई भणावइ छइ ।

अत्रना श्रीसंघरी वंदणा । श्रा. सुजाणदे श्रा. नाह ... श्रा अहंकारदे, संसारदे, केसरदे, प्रमुखरी वन्दना ऽवधारेज्यो ॥ आसु सूदि १२

वा. हीररत्नजी नइ वन्दना वांचेज्यो ।

x x x

चौड़ाई ११ और लम्बाई २०.५ से.मी. है ।

यह पत्र सूरत में विराजमान श्रीजिनरत्नसूरिजी के पट्टधर श्रीजिनचन्द्रसूरिजी को लिखा गया है । मेड़ता से उपाध्याय पुण्यकलशजी, श्री जयरंग, श्रीतिलोकचन्द्र, श्री चारित्रचन्द्र आदि शिष्य समुदाय के साथ लिखकर भेजा है । मिति आसोज सुदि १२ दी है किन्तु संवत् नहीं दिया है । श्रीजिनचन्द्रसूरि का आचार्यकाल विक्रम संवत् १७०० से १७११ है । अतः यह पत्र इसी मध्य में लिखा गया है । पत्र का प्रारम्भ संस्कृत के शार्दूलविक्रीडित छन्द में १४ श्लोकों में किया गया है जो आचार्य के विशेषणों से परिपूर्ण है ।

इसके पश्चात् सारा का सारा पत्र राजस्थानी भाषा में लिखा गया है जिसमें यह दर्शाया गया है कि उपाध्याय पुण्यकलशजी का अपने शिष्य वृन्द के साथ चातुर्मास मेड़ता में है । पर्युषण पर्व पर धर्माराधन इत्यादि का उल्लेख किया गया है । और चाहते हैं कि आचार्यश्री आदेश दें तो नागोर की तरफ विहार करें ।

इस पत्र की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना का जो उल्लेख किया गया है वह है :-

॥ पं. सुगुणचन्द अष्टसहस्त्री लाभाणन्द आगइ भणइ छइ ऽद्धरइ टाणइ भणी । घणउ खुसी हुई भणावइ छइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाभानन्दजी सुगुणचन्द्र को अष्टसहस्री प्रसन्नतापूर्वक पढ़ा रहे हैं । अष्टसहस्री आकर और उच्चतम दार्शनिक ग्रन्थ है । जिस पर न्यायाचार्य श्री यशोविजयोपाध्यायजी ने टीका लिखी है । इस ग्रन्थ का सामान्य विद्वान् अध्ययन नहीं कर सकता । उस पर भी उस ग्रन्थ को पढ़ाने का दायित्व लाभानन्दजी संभाल रहे हैं । स्पष्ट है कि लाभानन्दजी सामान्य विद्वान् नहीं थे, उच्चकोटि के विद्वान् थे, पारङ्गत मनीषी थे । क्योंकि चिन्तन के बिना इस ग्रन्थ को पढ़ाना सम्भव नहीं था । पढ़ने वाले सुगुणचन्द्र भी समर्थ विद्वान् थे । इसी कारण लाभानन्दजी के पास प्रसन्नतापूर्वक पढ़ रहे थे ।

आनन्द 'नन्दी' देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि जब तक वे लाभानन्दजी रहे तब तक वे खरतरगच्छ के ही थे । ज्यों ही सब कुछ उपाश्रय, परिग्रह, नाम इत्यादि का त्याग कर अवधूत आनन्दघन बने तो वे सब गच्छादि से मुक्त हो गए और सर्वमान्य हो गए । वे परम आगमिक, दार्शनिक, आत्मानन्दी और रहस्यवादी विद्वान् थे । यही कारण है कि उनकी चौवीसी और पद दर्शनशास्त्र के गूढ रहस्यों से परिपूर्ण होने के कारण वे सार्वजनीन हो गए । किसी गच्छ के न रहे, किसी परम्परा के न रहे । आज श्वेताम्बर समाज आनन्दघनजी को योगीराज ही मानता आया है और उनकी कृतियों को सर्वदा सिर चढ़ाता आया है । ऐसे योगीराज को मेरा कोटिशः नमन ।[१]

---

१. [सम्पादकनी नोंध : आनन्दघनजीने तपागच्छवाळा तपागच्छीय तरीके स्वीकारे छे, अने खरतरगच्छवाळा खरतरगच्छना माने छे. डॉ. कुमारपाल देसाईए पोताना आनन्दघनविषयक शोधप्रबन्धमां आ विशे विशद चर्चा करीने तारणो आप्यां छे. वास्तवमां आ मुद्दो आनन्दघनजीनी सर्वमान्यता नो ज संकेत आपे छे. अन्य गच्छना मुनि अन्यगच्छीय पासे पण भणता ज हता अने होय छे, ते मुद्दो पण वीसरवो न जोईए.

एक बीजी विशिष्ट वात ए नोंधवी छे के अमारा परमगुरु शासनसम्राट विजयनेमिसूरि महाराजनुं चरित्रलेखन करवानो प्रसंग आव्यो, त्यारे तेमना जीवननी दस्तावेजी नोंधनां पृष्ठो फेरवतां एक विलक्षण वात नोंधायेली मळी आवी. ते वात आवी छे : "तपगच्छना धुरन्धर अने उद्भट विद्वान् उपाध्यायश्री धर्मसागरजी महाराज, आनन्दघनजी पासे भगवतीसूत्रनी वाचना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य प्रवर स्वर्गीय श्री विजयकलापूर्णसूरिजी महाराज ने आनन्दघनजी के मेड़ता स्थित उपाश्रय का जीर्णोद्धार करवाकर दर्शनीय गुरु मन्दिर बनवा कर भक्तों के लिए अनुपम कार्य किया है ।

C/o. **प्राकृत भारती**
१३-A. मेन गुरुनानकपथ
मालवीय नगर
जयपुर-३०२०१७

*

लेता हता. पोते दीक्षा तथा वयमां वडील अने आनन्दघन घणा नाना, छतां तेमने पाटला पर बेसाडी पोते विनयपूर्वक सामे ~~बेसीने~~ वाचना लेता हता."

अलबत्त, आ वात दन्तकथा छे के हकीकत, तेनो निर्णय करवानुं कोई साधन नथी ज. परन्तु नेमिसूरिमहाराज पासे परम्परागत आ वात आवी होई ते साव निराधार होय तेम पण मानवुं ठीक नथी.

धर्मसागरजीने भगवतीसूत्र न आवडतुं होय ते तो शक्य ज नथी; पण आनन्दघनजी पासे कोई विलक्षण रहस्यबोध हशे, अने ते कारणे ज आवा वृद्ध पुरुष पण तेमनो लाभ लेवा प्रेराया हशे एम बनवाजोग छे. अस्तु. **–शी.**]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महोपाध्याय समयसुन्दर रचित

अष्टलक्षी: एक परिचय

म० विनयसागर

सरस्वतीलब्धप्रसाद महोपाध्याय कविवर **समयसुन्दर** के नाम से कौन अपरिचित होगा ? १७वीं शती के उद्भट विद्वान में इनकी गणना की जाती है । ये न केवल जैनागम, जैन साहित्य और स्तोत्र साहित्य के ही धुरन्धर विद्वान थे, अपितु व्याकरण, अनेकार्थी साहित्य, लक्षण, छन्द, ज्योतिष, पादपूर्ति साहित्य, चार्चिक, सैद्धान्तिक, रास साहित्य और गीति साहित्य के भी धुरन्धर विद्वान थे ।[१] राजस्थान में इनके लिये यह उक्ति प्रसिद्ध है - **महाराणा कुम्भा रा भीतड़ा अर समयसुन्दर रा गीतड़ा ।**

कविवर सम्राट अकबर प्रतिबोधक और तत्प्रदत्त युगप्रधान पदधारक श्री जिनचन्द्रसूरिजी के प्रथम शिष्य श्रीसकलचन्द्र गणिजी के शिष्य थे । कवि का जन्म विक्रम संवत् १६१० के लगभग सांचोर में हुआ था । यो प्राग्वाट् जाति के थे और उनके माता-पिता का नाम लीलादेवी और रूपसी था । विक्रम संवत् १६२८-३० के मध्य में इनकी दीक्षा हुई होगी । इनकी शिक्षा-दीक्षा वाचक महिमराज (श्रीजिनसिंहसूरि) और समयराजोपाध्याय के सान्निध्य में हुई थी । इनका स्वर्गवास विक्रम संवत् १७०३ चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन अहमदाबाद में हुआ था । इनकी विशाल शिष्य-प्रशिष्य परम्परा भी २०वीं शताब्दी तक विद्यमान थी ।

कविवर को गणिपद गणनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने ही विक्रम संवत् १६४१ में प्रदान कर दिया था । सम्राट अकबर को अपनी धर्मदेशना से प्रतिबोध देने के लिए जब आचार्य जिनचन्द्रसूरि लाहौर पधारे थे उस समय समयसुन्दरगणि भी साथ में थे । सम्राट अकबर ने जब भी जिनचन्द्रसूरि को युगप्रधान पद और वाचक महिमराज (जिनसिंहसूरि) को आचार्य पद दिया था, उस समय महामन्त्री कर्मचन्द बच्छावत कृत संस्मरणीय महोत्सव के समय ही जिनचन्द्रसूरिजी ने अपने करकमलों से समयसुन्दर को वाचनाचार्य पद से अलंकृत किया था ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्ववर्ती कवियों द्वारा सर्जित द्विसन्धान, पञ्चसन्धान, चतुर्विंशति सन्धान, शतार्थी, सहस्रार्थी कृतियाँ तो प्राप्त होती हैं, जो कि उन कवियों के अप्रतिम वैदुष्य को प्रकट करती हैं, किन्तु समयसुन्दर ने 'एगस्स सुत्तस्स अणंतो अत्थो' को प्रमाणित करने के लिए 'राजानो ददते सौख्यम्' इस पंक्ति के प्रत्येक अक्षर के व्याकरण और अनेकार्थी कोषों के माध्यम से १-१ लाख अर्थ कर जो अष्टलक्षी / अर्थरत्नावली ग्रन्थ का निर्माण किया, वह तो वास्तव में बेजोड़ अमर कृति है । समस्त भारतीय साहित्य में ही नहीं अपितु विश्वसाहित्य में भी इस कोटि की अन्य कोई रचना प्राप्त नहीं हैं ।

'राजानो ददते सौख्यम्' पद के प्रत्येक अक्षर के लाखों अर्थ करने के लक्ष्य / प्रयोग को ध्यान में रखकर कवि ने अनेक ग्रन्थो एवं ग्रन्थकारों का उल्लेख करते हुए उदाहरण भी प्रस्तुत किये हैं । जिनमें से उल्लेखनीय कतिपय नाम इस प्रकार हैं :-

जैनागमों में - आवश्यक निर्युक्ति, आवश्यक सूत्र बृहद्वृत्ति, स्थानांग सूत्र, जयसुन्दरसूरि कृत शतार्थी; पुराणों में - स्कन्दपुराण, महाभारत, व्याकरण ग्रन्थों में - सिद्धहेम शब्दानुशासन - बृहन्न्यास - बृहद्वृत्ति - सारोद्धारकक्षपुट, पाणिनीय धातुपाठ, अव्ययवृत्ति व्याख्या, कालापक व्याकरण, सारस्वत व्याकरण, विष्णुवार्तिक; लक्षण ग्रन्थों में काव्यप्रकाश, रुद्रटालङ्कार टीका, वाग्भटालङ्कार, काव्यकल्पलता वृत्ति; काव्य ग्रन्थों में - नैषध काव्य, कुमार सम्भव काव्य, मेघदूत काव्य, खण्डप्रशस्ति, चम्पूकथा, नीतिशतक; कोष ग्रन्थों में - अमरकोष, अभिधान चिन्तामणि नाममाला, धनञ्जय नाममाला; एकाक्षरी एवं अनेकार्थी कोषों में - अनेकार्थ संग्रह, विश्वशम्भु नाममाला, सुधाकलशीय एकाक्षरी नाममाला, अनेकार्थ तिलक, कालिदासीय एकाक्षरी नाममाला, वररुचिकृत एकाक्षर निघण्टु; ज्योतिष में रत्नकोष आदि अनेक ग्रन्थों के उदाहरण दिये हैं।

इस ग्रन्थ के रचना प्रसंग के सम्बन्ध में कवि ने स्वयं लिखा है[२] :-

सं. १६४९ श्रावण सुदि १३ पातिशाह अकबर ने काश्मीर विजय करने के उद्देश्य से प्रयाण किया । पहले दिन का डेरा राजा रामदास के बगीचे में डाला । उसी दिन संध्या के समय जहांगीर, सामन्त, मण्डलीक राजागण तथा व्याकरण एवं तर्कशास्त्र के विद्वानों की उपस्थिति में सम्राट अकबर ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनचन्द्रसूरि को जिनसिंहसूरि आदि प्रमुख शिष्यवृन्द के साथ बड़े सम्मान के साथ बुलाकर यह अष्टलक्षी ग्रन्थ मेरे (समयसुन्दर) से दत्तचित्त होकर सुना। यह ग्रन्थ सुनकर पातिशाह अकबर हर्ष से विभोर एवं गद्गद् होकर इसकी अत्यन्त प्रशंसा करते हुए कहा कि - इस ग्रन्थ का पठन-पाठन सर्वत्र विस्तृत हो। ऐसा कहकर यह ग्रन्थ स्वयं के हाथ में लेकर मुझे प्रदान कर इस ग्रन्थ को प्रमाणीकृत किया।

इस ग्रन्थ का रचना स्वरूप इस प्रकार है :-

प्रणाली - मंगलाचरण में सूर्य एवं ब्राह्मी देवता को नमस्कार किया है-

१,००४ - राजा नो, राजा आनो, रा अज अ अ नः, रा अजा नो, राज आ नो राजाना उ. राजाव् नो राजाय् नो, ऋ आजा नो इस प्रकार राजानो शब्द के अर्थ किये हैं।

८७५ - राजा के 'अ' को सम्बोधन बनाकर नो दद अनोदद आनोदद पद के ८७५ अर्थ किये हैं।

३,४२० - 'दद' शब्द को सम्बोधन बनाकर 'ददादद' पद के ३४२० अर्थ किये है। इस प्रकार ८७५ और ३४२० अर्थ कुल ४२९५ अर्थ नोदद के होते हैं।

पश्चात् 'ते' शब्द को तृतीया, चतुर्थी, प्रथमा, पञ्चमी, षष्ठी विभक्त्यर्थ ग्रहण किया है। अर्थात् ४२९५ अर्थों के 'ते' की प्रत्येक विभक्ति से पांच वार गुणित करने पर २१४७५ अर्थ हो जाते हैं।

२१,४७५ - साथ ही यह भी संकेत किया है कि राजन् शब्द के यक्षवाचक और सूर्यवाचक अर्थ भी किये जाय।

७० - पुनः प्रकारान्तर से 'दद' शब्द को दानदायक अर्थ में नञ् समास पूर्वक ७० अर्थ किये हैं।

५७ - पुनः केवल 'द' शब्द के ५७ अर्थ किये हैं।

४,०६० - इसके पश्चात् लेखक का कथन है कि दानदायक 'दद' पद के केवल नञ् समास पूर्वक जो ७० अर्थ हैं, उस प्रत्येक एक अर्थ को 'द' शब्द के ५७ अर्थों में प्रयुक्त करे। अर्थात् ७० को ५७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से गुणित करने पर ३९९० अर्थ होते हैं । इनके साथ शुद्ध दानदायक 'दद' के ७० अर्थ स्वतन्त्र रूप से सम्मिलित करने पर कुल ४०६० अर्थ होते है ।

२५,५३५ - इस प्रकार 'नोदद' 'अनोदद', 'आनोदद' तथा 'ददादद' के २१४७५ अर्थों के साथ 'दद' 'द' के ४०६० अर्थ मिलाने पर कुल २५५३५ अर्थ हो जाते हैं ।

१० - सौख्यं पद के १० अर्थ हैं । प्रत्येक अर्थ को २५५७५ के साथ
२,५५,३५० संयुक्त करने पर अर्थात् दश गुणित करने पर कुल अर्थ २,५५,३५० अर्थ हो जाते हैं ।

२ - पश्चात् २,५५,३५० अर्थों को नञ् समास पूर्वक करने पर अर्थात्
५,१०,७०० सुख शब्द दुःखार्थ में परिणत हो जाता है । सौख्यं - असौख्यं अर्थ होने पर द्विगुणित हो जाते हैं अतः कुल अर्थ ५,१०,७०० हो जाते हैं ।

२ - इन अर्थों को काकूक्ति के अर्थ में ग्रहण करने पर द्विगुणित हो
१०,२१,४०० जाने से १०,२१,४०० अर्थ हो जाते हैं ।

६ - पुनः ग्रन्थकार ने शृङ्खला नाम प्रश्नोत्तर जाति भेद से **राजा जानो नोद दद दते ते असौ सौख्यी अग्** पदार्थ से ६ अर्थ किये हैंङ्।

१०,२१,४०६

१,००० - यहां कवि ने निर्देश किया है कि प्रारम्भ में जो राजानो शब्द के १००० (वस्तुतः १००४ अर्थ हैं) अर्थ इसमें सम्मिलित किये जायँ ।

१०,२२,४०६

१ - अन्त में एक अर्थ अकबर का किया है वह इस प्रकार है :-

राजा के र अ अज अ आ खण्ड कर
र - श्री (पंक्तिरथ न्याय से)
अ - अ
अज - क (ब्रह्म का पर्याय)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अ - ब (वायु का पर्याय व बवयोः ग्रहण कर)
आ - र (अग्नि का पर्याय)
इस तरह राजा शब्द का अर्थ श्रीअकबर बनता है ।

१०,२२,४०७

अन्त में कवि का कथन है कि २,२५,४०७ अर्थ जो अधिक हैं, ये अर्थ अष्टलक्षी में कहीं संभव नहीं हो, अथवा अर्थयोजना से मेल न खाते हो अतः इतने अर्थों का परित्याग कर देने पर ८,००,००० अर्थ अविघट एवं अविसंवादी रूप से शेष रहते हैं ।[३]

सम्राट अकबर की प्रशंसा करते हुए कवि कहता है कि न्यायी होने से प्रजा को सुखदायक है, परम कृपाशील है, तीर्थस्थानों का करमोचक है, षड्दर्शनियों का सम्मान करने वाला है, शत्रुञ्जयादि महातीर्थों की रक्षा करने वाला है, जैन आदि समस्त धर्मों का भक्त है तथा सब लोगों का मान्य है।

इस प्रकार गद्य में कहकर ८ श्लोकों में अकबर की गौरव प्रशस्ति दी है ।

'राजानो ददते सौख्यम्' पद की टीका होने के कारण कवि ने इस वृत्ति का नाम **अर्थरत्नावली** वृत्ति दिया है । इस पद्यांश के आठ लाख अर्थ होने के कारण इसका प्रसिद्ध नाम अष्टलक्षार्थी भी है ।

कवि ने इसके पश्चात् ३३ श्लोकों की विस्तृत रचना- प्रशस्ति में अपनी गुरु परम्परा दी है ।

इस ग्रन्थ को डॉ० हीरालाल रसिकदास कापड़िया ने सम्पादित कर **अनेकार्थरत्नमञ्जूषा** में विस्तृत भूमिका के साथ प्रकाशित किया है । यह ग्रन्थ श्रेष्ठि देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार संस्था सूरत की ओर से ईस्वी सन् १९३३ में प्रकाशित हुआ है । सम्पादक ने रचना-प्रशस्ति पद्य ३२ में **श्रीविक्रमनृपवर्षात्, समये रसजलधिरागसोम (१६४६) मिते** में रस शब्द को मधुरादि षड् रस मानकर छः की संख्या दी है जबकि यहाँ रस शब्द से शृङ्गारादि नवरसाः नौ अंक का ग्रहण किया जाना उपयुक्त है, क्योंकि प्रशस्ति पद्य २४-२५ के अनुसार सम्राट अकबर ने जिनचन्द्रसूरि को युगप्रधान पद १६४९ में ही दिया था । इसी ग्रन्थ के पृष्ठ ६५ तथा १५ वीं पंक्ति में संवत्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६४९ स्पष्ट लिखा है। अत: स्पष्ट है कि ग्रन्थ की रचना १६४९ श्रावण शुक्ला त्रयोदशी के पूर्व हुई है और प्रशस्ति की रचना ७ मास के पश्चात्।

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् १९३३ में प्रकाशित हुआ था जो आज अप्राप्त है। श्रुतज्ञ विद्वानों के अध्ययन, पठन-पाठन एवं वैदुष्य प्राप्ति के लिए इस ग्रन्थ की महती उपयोगिता है, अत: साहित्यिक संस्थानों से मेरा अनुरोध है कि इसका सम्पादित द्वितीय संस्करण शीघ्र ही प्रकाशित करें।

टिप्पणी -

१. कवि के विशेष परिचय के लिए देखें - महोपाध्याय विनयसागर: महोपाध्याय समयसुन्दर
२. अनेकार्थरत्नमञ्जूषा पृष्ठ ६५
३. वही, पृष्ठ ६७
४. वही, पृष्ठ ७०

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संशोधन विरुद्ध कट्टरता : घेरी चिन्तानो विषय

डो. मधुसूदन ढांकी अेटले अेक विश्वविश्रुत स्थापत्यशास्त्री, इतिहासवेत्ता, पुरातात्त्विक अने आगमादि शास्त्रोना बहुश्रुत अध्येता. पोतानी विलक्षण स्मरणशक्ति अने मर्मवेधी निरीक्षणक्षमताने कारणे, पोताना रसना अथवा संशोधनना विषयनुं तलस्पर्शी परीक्षण अने ते द्वारा पोताने जडेला निष्कर्षनुं अकाट्य तर्कोपूर्वक छतां वैज्ञानिक - नहि के वैतंडिक - रीते प्रतिपादन, अे तेमनी संशोधन पद्धतिनो में अनुभवेलो विशेष छे.

पोताना संशोधन-प्रतिपादनने कारणे कोइ रूढिपूजकने कदीक खोटुं लाग्यानी जाण थाय तो, पोताना ते प्रतिपादनमांथी लेश पण विचलित थया विना पण, निर्ग्रन्थ मार्गना क्षमाधर्मने अनुसरीने पेला रूढिपूजकनी क्षमा मागी ले; अने जो तेमना संशोधनने, कोइ बुद्धिमान माणस, अन्य प्रमाणो द्वारा अन्यथा पुरवार करी आपे तो, जाहेरमां अने लिखित रीते पोतानी क्षतिना स्वीकार तथा तेमां करवो घटतो फेरफार करवा जेटली संशोधकसुलभ खेलदिली तेमज उदारता दर्शावी शके, तेनुं नाम ढांकीसाहेब.

मारो अनुभव छे के डो. ढांकीने पुरातत्त्वनां, इतिहासनां तथा आगमादिनां प्रमाणो दर्शावीने तेमना मत के संशोधन साथे तमे मतभेद दर्शावो तो तेओ बहु राजी थाय. पण प्रमाण अथवा आधारो विना ज, आडेधड जो तमे तेमने खोटा पाडवानो आयास करो तो तेमना प्रमाणाधारित अने तर्कबद्ध सवालोनो प्रवाह अेवो वहे के भला भला अटवाई जाय.

आवा विलक्षण विद्वान डो. ढांकीअे जैन इतिहासनी केटलीक विशिष्ट बाबतोने अंगे अनेक शोधलेखो लख्या छे, जे ते ते समये अनेक शोध-सामयिको वगेरेमां प्रकाशित थया ज हता, पण थोडा वखत अगाउ ते लेखो 'निर्ग्रन्थ ऐतिहासिक लेख समुच्चय' भाग १/२ अे नाम ग्रन्थस्थ थईने सुलभ बन्या छे. आ बन्ने ग्रन्थोनुं, माहिती आपतुं अवलोकन, 'अनुसन्धान'मां पूर्वे प्रगट थयुं ज छे. इतिहास अने संशोधनना क्षेत्रे काम करनार वर्गमां तेनो समादर पण झाझेरो थयो छे.

मुश्केली थोडाक रूढिपूजक अथवा तो रूढिजड लोकोने पडी छे. आ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोको, पोताने मळेली रूढ अने पारम्परिक मान्यताओथी जुदी वात कोई संशोधक करे, अे वातने स्वीकारवा तो नहि, पण बरदास्त करवा पण तैयार नथी होता. अमे जे रूढिगत बाबत परत्वे जे मान्यता धरावीअे छीअे ते ज सनातन सत्य छे, अने ते रीते मानवामां ज धर्म, धर्मश्रद्धा टकी शके छे, तेथी जुदुं, अर्थात् स्वीकृत पारम्परिक सत्यने खोटुं पाडे तेवुं कांई पण मानवुं के लखवुं, ते परम्परा प्रत्येनो अछाजतो अपराध छे; आवुं, वस्तवमां अनुचित गणाय तेवुं वलण आ केटलाक लोकोअे अपनाव्युं छे.

संशोधके करेल प्रतिपादनोनुं प्रमाण पुरस्सर निरसन करवुं ते अेक स्वस्थ गणाय तेवुं वलण छे. क्वचित् प्रमाणो खोळतां के रजू करतां न फावे तो पण, 'तमे गमे ते संशोधन करो, अमे तो अमारी पारम्परिक मान्यताने ज स्वीकारीशुं' आवुं कहीअे तो ते पण प्रमाणिक वलण गणाय. परंतु, आवुं कशुं ज करवाने बदले, ते संशोधकनां लखाणोने अने तेने ग्रन्थने पाछां खेंची लेवानी अथवा तो ते पर प्रतिबन्ध लादवानी पेरवी करवी, ते तो सर्वथा अप्रमाणिक, अस्वस्थ अने हानिकारक वलण ज बनी रहे तेम छे.

आवुं हानिकारक वलण डॉ. ढांकीना उपर उल्लेखेला ग्रन्थ परत्वे थोडाक रूढिपूजक लोकोअे अपनाव्युं होवानुं जाणवा मळे छे, जे खरुं होय तो खूब ज खेद जनक छे. डॉ. ढांकीअे 'नवकार' विशे अेक विचारोत्तेजक अने संशोधनात्मक लेख लख्यो छे. अे लेखथी आ लोकोनी श्रद्धाविषयक धारणाना पाया हचमची ऊठ्य छे. तेथी तेमणे पोताना तन्निष्ठ प्रयत्नो करीने आ ग्रन्थोने 'अयोग्य' ठरावीने तेना पर 'प्रतिबन्ध' कही शकाय तेवी परिस्थिति लादवानो प्रबंध कर्यानुं जाणवा मळ्युं छे. वधुमां, आ ग्रन्थ साथे 'कस्तूरभाई लालभाई स्मारकनिधि'नुं नाम प्रकाशक तरीके जोडायुं होवाने कारणे, तेना संचालको, पेला रूढिजड लोकोना आग्रहने अधीन थई गया होवानुं पण जाणवा मळे छे.

प्रसंगोपात्त एक बीजी बाबत पण अहीं उल्लेखवी जरूरी लागे छे. डॉ. ढांकी शिल्प-स्थापत्यशास्त्रना विश्वख्यात विशिष्ट विद्वान छे. भारतनां मन्दिरो विशेना विश्वकोशनी तेमनी योजना अने ते विषयना तेमना ग्रन्थो, ए शोधक्षेत्रना इतिहासनुं अेक सीमाचिह्न गणाय छे. तेमना आ विषयना ज्ञाननो लाभ जैन संघने मळे ते हेतुथी, शेठ कस्तूरभाई लालभाई तथा मुनिराज श्री पुण्यविजयजी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जेवा महानुभावोओ, केटलांक जैन पुरातन मन्दिरोना शिल्प शास्त्रीय परिचयो तैयार करी आपवा डो. ढांकीने कहेलुं. तदनुसार डो. ढांकीओ आठेक तीर्थोना परिचयो तैयार करी आप्या, जे Monographs कही शकाय तेवी पुस्तिकाओ (सचित्र) रूपे प्रकाशित पण थया छे. आ परिचयो परम्परागत आस्थाना पोषण-संवर्धन माटे नहि, पण ते ते तीर्थ/ मन्दिरना शिल्पशास्त्रीय तथा स्थापत्यकीय परिचयनी प्राप्ति खातर ज लखाया छे ते तो स्वयंस्पष्ट छे.

जे काम अंग्रेजीमां थाय तो विश्वभरमां तेनुं भारे मूल्य अंकाय, ते काम, जैन संघना लाभार्थे, ज गुजरातीमां, डो ढांकीओ कर्युं. पण पेला रूढिजड लोकोने आ मूल्यवान काम पण ना गम्युं. जाणवा मळ्या मुजब तेमणे अेम कह्युं के ' आ पुस्तिकाओमां ते ते तीर्थ प्रत्ये भक्ति अने श्रद्धा जागे-वधे, तेवुं कांई ज लखाण नथी, माटे आ पुस्तिकाओ पर प्रतिबन्ध होवो जोईअे.' फलतः आ ज संचालकोओ पेला लोकोनी आ मागणीनो पण स्वीकार तथा अमल कर्यो होवानुं जाणवा मळे छे.

जैन समाजनी सांप्रत नेतागीरी अत्यारे कया मार्गे छे तेनुं आ बे घटनाओमां स्पष्ट प्रतिबिम्ब जोवा मळे छे, जे जोतां, विवेकभान-विहीन, धर्म तथा सम्प्रदायने शोभे तेवी उदारता तेमज विचारशीलता विहोणी, जडता अने कट्टरतानो भयजनक रोग जैन समाजने लागु पड्यो छे के शुं ? अेवी दहेशत हवे जागे छे.

★★★

प्रत्येक धर्म अने तेनी परम्पराने जेम तेनो पोतानो इतिहास छे, तेम अेने पोताना आगवा अैतिहासिक गोटाळा पण होय छे. आपणे त्यां, ऐतिहासिक तथ्यो अने साधनोनी नोंध अने मावजत करवानी प्रथा-पद्धति ज नथी. महदंशे बधुं कण्ठ अने कर्ण-परम्पराथी ज नभतुं आव्युं छे. बहु मोडेथी थोडाक लोकोने इतिहास-बोध जागृत थतां तेमणे, प्रबन्धादिरूपे, तेमने उपलब्ध अेवी विगतोनी नोंध करी जरूर; पण तेमां समयना, नामोना तेमज विगतोना अेटला बधा व्यत्ययो, व्युत्क्रमो थया के तेना कारणे अनन्त गोटाळा सर्जाया. ज्यारे विद्वान संशोधको, आधुनिक अर्थात् वैज्ञानिक पद्धतिथी संशोधन करवा बेठा, त्यारे आवा गोटाळा तेमनी शोधक दृष्टिथी पकडावा मांड्या.

जैन इतिहासनी घटनाओनो, व्यक्तिओनो तथा तेना काळनो निर्णय करवो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होय त्यारे, विद्वानोअे, भारतवर्षना राजकीय इतिहासने, अन्य अेटले के वैदिक अने बौद्ध जेवा मतोना इतिहासने, भाषाप्रयोगोने, साहित्यिक तथा शिलालेखी प्रमाणोने, पुरातात्त्विक उत्खननो अने शोधखोळो द्वारा सांपडतां तथ्योने - आ बधांने पण नजर समक्ष राखीने, तेना परिप्रेक्ष्यमां ज निर्णय करवानो होय छे. पारम्परिक धार्मिक मान्यताओने 'साची ज' मानीने ज जो तेमने संशोधन करवानुं होय तो तो पछी तेमनां संशोधननो अर्थ ज क्यां रहे छे ?

हवे ज्यारे आ बधी बाबतोने लक्ष्यमां लईने कोई अेक जैन घटनानो निर्णय करवानो होय, तो ते वखते पछी धार्मिक परम्परा के मान्यता शुं छे तेनो विचार संशोधक माटे अप्रस्तुत ज बनी रहे. अलबत्त, पोताना संशोधननो अर्थ अने उपयोग, धार्मिक मान्यतानी परम्परा पर प्रहार करवा माटे करवानुं, साचा संशोधकना मनमां पण न होय. तेनुं काम तो पोताने सूझेलुं संशोधन विद्वानो तथा विचारको समक्ष रजू करी देवानुं ज होय छे. पछी तेनो स्वीकार करवो के न करवो ते तो परम्परानी इच्छा उपर ज निर्भर होय छे. आम छतां, संशोधकना आशय उपर मलिनतानो आक्षेप करवो अने तेमना संशोधनने तथा तेना प्रसार-प्रचारने रोकवानी योजना करवी, ते तो बौद्धिक क्षमतानी दृष्टिअे पछात होय तेवा समाजमां ज शोभे; जैनोने नहि.

जैन मुनिओ तो विचारशील होय; उदार होय; पोतानी परम्परागत वातोनुं बहुमान तेमना हृदयमां अखूट ज होय, पण साथे साथे, नवां अने प्रमाणभूत अेवां संशोधनो तेमज विचारो परत्वे अेमनो दृष्टिकोण जिज्ञासासभर होय अने तिरस्कारभर्यो तो नहीं ज.

अेक रूढ मान्यता, धारो के सेंकडो वर्षोथी चाली आवती होय; बधा ज तेनो स्वीकार श्रद्धाभेर करता होय; अने अे मान्यता परत्वे कोई संशोधक विद्वान, अधिकृत प्रमाणो दर्शाववापूर्वक, ते मान्यताथी तद्दन विपरीत वात शोधी बतावे, तो तेमां तेणे अपराध शो कर्यो ? हा, परम्परा ते प्रमाणभूत वातने स्वीकारे तो तेने 'मिथ्या'ना त्यागनो अने 'सत्य'ना पुरस्कारनो सम्यक्त्व-लाभ जरूर थाय; पण तेम करवुं जो शक्य न होय तो, तेम करवा माटे पेला संशोधक आपणने कांइ फरज तो पाडवाना नथी ज ! तो पछी संशोधक अने तेना संशोधनथी आपणे आटला बधा डरीअे छीअे शा माटे ? अकळाइ जवानुं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शा माटे ? अन्तिम कही शकाय तेवां पगलां भरवानुं शा माटे ?

आथी तो अेवुं थशे के मूळे जैन होय तेवा विद्वान के संशोधक तो आपणी पासे छे नहि. नवा तैयार थाय तेवो अेक पण संयोग आपणे रहेवा पण दीधो नथी ! अने जे बे-त्रण जणा छे, तेमनो लाभ पण, आपणी आवी वृत्ति-प्रवृत्तिने कारणे, आपणने मळतो अटकी जशे.

खरेखर तो आपणे आवा शोधक विद्वानोनो भरपूर लाभ उठाववो जोइअे. अे माटे अेमनी बधी वातो साथे सहमत थवुं के होवुं जरूरी नथी होतुं. आपणी श्रद्धाने अकबंध राखीने पण तेमना दृष्टिकोण तथा विचारो समजी शकाय छे. तेमणे गवेषेलां प्रमाणो जाणी शकाय छे, अने तेनी साधक-बाधक चर्चा पण थई शके छे. आवुं करी शकाय तो आपणे घणा घणा समृद्ध बनी शकीअे अेमां शंका नथी.

बाकी डॉ. ढांकी विषे अेटलुं ज कहुं के दिगम्बरो द्वारा थता अनेक शास्त्रीय तथा तात्त्विक आक्षेपोनो प्रमाणभूत तथा अधिकारपूर्वक प्रतिवाद आपनार - आपी शकनार, तथा ते लोकोनां खोटां संशोधनो तथा अर्थघटनोनां मर्मस्थानोने पकडी पाडीने तेना तर्कपूत, शास्त्रसिद्ध तेमज इतिहाससिद्ध प्रत्युत्तर आपनार जो कोइ श्वेताम्बर विद्वान आपणी पासे होय तो ते एक मात्र डॉ. मधुसूदन ढांकी छे. आवा विद्वानने गुमाववानुं आपणने पालवे तेम नथी, अे वात मात्र कोई सुज्ञ तथा विवेकी व्यक्ति ज समजी शके तेम छे.

हा, तमारी पासे परम्परानो, आगमादि पंचांगीनो, तथा अन्यान्य शक्य तेटली अधिक विद्याशाखाओनो सुदृढ अभ्यास होय तो, तमे तेना आधारे-प्रमाणपूर्वक, डॉ. ढांकीअे करेलां जे पण विधानो सामे तमने वांधो होय, तेनुं खण्डन के तेनो प्रतिवाद अवश्य लखी शको छो. विचारशील अने विवेकी मनुष्यने तो आवुं करवुं ज शोभे. पण आटली-आवी सज्जता क्यांथी लाववी ? पण तेवी सज्जता न होय तोय कांइ विवेक तो न ज चूकाय !

★★★

संशोधन अने पारम्परिक मान्यता अे बे वच्चेनो तफावत पण समजवा जेवो तो छे ज. दा.त.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. आपणे त्यां अेटले के जैन संघमां, कोई पण प्रतिमा जरा प्राचीन होय अने तेना पर लेख-लांछनादि निशान न होय, तो ते प्रतिमाने 'सम्प्रति राजानी भरावेली प्रतिमा' तरीके ओळखवामां क्षणनो पण विलम्ब थतो नथी. 'प्रतिमा जेम प्राचीन तेम तेनी उपासनामां भावोल्लास वधु थाय' अेवी श्रद्धा ज आमां काम करती होय छे ते तो सहेजे समजी शकाय तेवुं छे.

हवे आ बाबते संशोधक-दृष्टिनो उपयोग करवामां आवे तो आ रीते विश्लेषण थई शके : (१) प्रतिमा पर कच्छ-कंदोरानां चिह्नो होय ज, अेटले अे वधुमां बधु पंदरसो वर्ष जेटली पुराणी गणाय; ते पहेलांनी नहि ज. (२) प्रतिमा आरसपहाणनी होय तो ते दसमा सैकाथी वधु प्राचीन न होय; आरसनो उपयोग १०मा सैका पछी ज चालु थयो छे. (३) प्रतिमानो आकार-प्रकार जोतां ज ते १२ मा के १५मा सैकानी हशे तेम अनुभवी अभ्यासी तत्काळ नक्की करी शके. (५) प्रतिमानी पलांठीमां अखण्ड के त्रुटक लेख होय तो तेना आधारे पण समयनो निर्धार थई जाय.

ताजेतरमां ज अेक जग्याअे बोर्ड वांच्युं : "२२०० वरस जूनी आ प्रतिमा छे." हवे प्रतिमाना घाटघूट वगेरे जोतां ते स्पष्टतः वधुमां वधु ४०० वर्ष पुराणी जणाती हती. अेक ठेकाणे बारमा सैकानी प्रतिमा पण '२३०० वर्ष प्राचीन' तरीके वखणाय छे.

संशोधनथी बीजो कोई लाभ नथी थतो, पण मिथ्या धारणाओने के असत्य मान्यताओने ते रोकी शके छे, अने सत्य के यथार्थ मान्यता तरफ श्रद्धाळुने दोरी जाय छे.

पण जो तेनो स्वीकार करी ले, तो तो पोते जे स्थानादिनो महिमा वधारवा झंखता होय ते न वधारी शकाय. अेटले संशोधनने मिथ्या ठेरववामां ज तेवाओने लाभ रहे छे. सवाल अेटलो ज के सत्य हाथवगुं होवा छतां मिथ्या धारणाने ज यथार्थ ठेरववानी आ प्रवृत्तिने 'सम्यक्त्व' गणी शकाय खरी ?

२. शत्रुञ्जयतीर्थनो अनर्गळ महिमा जैन संघमां प्रवर्ते छे तेनो सघळोये आधार 'शत्रुञ्जय माहात्म्य' नामना ग्रन्थ उपर छे, अे तो सर्वविदित छे. आ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ तेरमा शतकमां थयेला आ. धनेश्वरसूरिअे रचेलो छे, ते पण तेनी प्रशस्ति तथा अन्य साधनो थकी सिद्ध बाबत छे.

आम छतां, परम्परागत मान्यता अेवी छे के आ धनेश्वरसूरि ते मल्लवादीगणिना वखतमां थया हता अने तेमनी आ रचना छे. हवे आ ग्रन्थ माटे, सम्भवतः १५ मा शतकमां कोइ अज्ञात पण अभ्यासी मुनिवरे लखेली ग्रन्थसूचि नामे **बृहट्टिप्पनिका**मां **"कूटग्रन्थोऽयं"** अे रीते उल्लेख थयो छे, जे वांचीने अेक विद्वान मुनिजने कहेलुं के आ उल्लेख वहेलो जड्यो होत तो आ ग्रन्थ अर्वाचीन होवानुं पुरवार करवा करेली संशोधनात्मक मथामण में न करी होत.

वधु चर्चा नथी करवी. परंतु आ अेक ज उल्लेख घणी बधी पारम्परिक आस्थाओ उपर प्रश्नार्थचिह्न मूकी आपवा माटे पूरतो पर्याप्त छे. तो शुं आपणे ते ग्रन्थसूचिकार मुनिवरने वखोडी काढीशुं ? तेमनी ते सूचि उपर प्रतिबन्ध लादीशुं ?

खरेखर तो अे सूचि पण कायम छे, अेमां अे उल्लेख पण यथावत् छे; अने छतां जनमानसमां सदीओथी केळवायेली तथा व्यापेली, आ ग्रन्थ प्रत्येनी तथा शत्रुञ्जयतीर्थ प्रत्येनी आस्था पण अक्षुण्ण छे.

संशोधन अने संशोधक परत्वेनो समग्र दृष्टिकोण, आथी ज बदलवा योग्य छे. जो अे नहि बदलाय तो ते कारणे थनारी हानि समग्र जैनसंघने हशे, विद्याजगतने हशे, संशोधनविश्वने हशे, इतिहासने हशे, अने तेनी सम्पूर्ण जवाबदारी आवा प्रतिबन्धो लादनाराओनी तथा ते लादवानी प्रेरणा करनाराओनी रहेशे, ते निःशंक छे.

• • •

वस्तुतः जैन समाजने लागेवळगे छे त्यां सुधी, जैन धर्म-दर्शनने सर्वाङ्गीण रीते समजवा माटे जेम आगमोनी अने शास्त्रोनी जरूर छे; तीर्थो, मन्दिरो अने प्रतिमानी जरूर छे; आचार्यादि साधुगण तथा गृहस्थवर्गनी जरूर छे; तेम इतिहासनी अने संशोधनदृष्टिनी पण जरूर छे; तेम शिल्प-स्थापत्यादि शास्त्रोनी पण जरूर छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दा.त. एक मूर्तिने आपणे हजारो वर्ष पुराणी मानता होईए, अने तेने इतिहासादि ५००-७०० वर्ष पहेलांनी ज होवानुं पुरवार/प्रमाणित करी आपे तो ते शक्य छे अने तेमां नाराज थवानुं कोई वाजबी कारण पण नथी. ऊलटुं, आवुं थाय तो आपणी भ्रान्ति-भ्रान्त मान्यता तूटे छे, अने विश्वसमाजमां सत्यनी तथा सत्यनो स्वीकार करनार समाज तरीके आपणी प्रतिष्ठा वधे छे.

एकांगी दृष्टिने विकृत थतां वार लागती नथी, तेथी सर्वतोमुख दृष्टि हवे अपनाववी अनिवार्य छे.

—x—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेषावश्यक भाष्यनुं शुद्धिपत्रक (४)

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४६४	२८	तु नया	तु न नया
४६४	३३	लक्ष्णे	लक्षणे
४६४	३६	संता पइ०	संता वि पइ०
४६४	३९	सन्तः प्रति०	सन्तोऽपि प्रति०
४६५	७	पृथक्त्वं	तत्थेवत्ति । तत्रैव-अपृथक्त्वे पृथक्त्वं
४६५	९	०रिदं पृथ०	०रिदमपृथ०
४६५	१२	तदाऽऽरत	तदारत
४६५	१५	०मुप्पपत्ती	०मुप्पत्ती
४६५	२१	तदाऽऽरत०	तदारत०
४६५	२५	०हत्तेऽणु०	०हत्ते अणु०
४६५	२९	०स्थपिता०	०स्थापिता०
४६६	२०	तथा विभा०	नयाऽविभा०
४६७	१५	०हवति	०हवत्ति
४६७	२२	तेन	ते न
४६८	१	०छेआ अस०	०छेआऽऽस०
४६८	९	पुनरन्तर०	पुररन्तर०
४६८	२३	भवन्ति	भगवति
४६८	३१	सावत्थी०	सावत्थि०
४७१	१४	०क्रादिच्छिन्न०	०क्राद् घटविच्छिन्न०
४७२	६	०माणं संस्कृतम्	०माणं कृतं, संस्तीर्यमाणं संस्कृतम्
४७२	२३	कथं	कह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४७३	९	दट्ठं	दड्ढं
४७४	१	सामा०	समा०
४७५	११	उन्तिम०	उ अन्तिम०
४७६	६	ततो	तो
४७६	६	०सिरिणा	०सिरीणा
४७६	३५	पसिद्धी	पसिद्धि
४७७	११	मूरिय०	मुरिय०
४७७	३१	राजकूल	राजकुल
४७८	५	ब्रवीति	व्रतीति
४८०	१२	संववहारो	ववहारओ
४८०	२३	जह	जइ
४८०	२८	वं	वयं
४८०	३१	०प्परं	०प्पर
४८१	११	०णुप्पवाए	०णुपवाए
४८१	२२	वयं न जा०	वयं जा०
४८१	२६	०मास मि०	०मासमि०
४८१	३२	०सोऽद्धाप०	०सो अद्धाप०
४८३	१४	संखाईय०	संखाइय०
४८३	१५	०त्थग्गह०	०त्थगह०
४८५	१०	निरवशेष०	निर्विशेष०
४८५	१५	क्खण०	खण०
४८५	२१	'नण्वि०	'नन्वि०
४८५	२७	०दिगादिनां	०दिगादीनां
४८६	१४	०त्रापालक०	०त्रालापक०
४८८	८	किमत्य०	किमित्य०
४८९	२५	०मनुज्ञाने	०मनुज्ञाते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४९०	५	०कुम्भादयः	०कुन्तादयः
४९०	२५	तदैवं	तदैव
४९०	२७	०न्ननाण०	०न्नन्नाण०
४९२	२१	०श्चैन्द्रीणा०	०श्चेन्द्राणा०
४९२	२२	यदृक्षया	यदृच्छया
४९२	३०	पोतकी०	पोताकी०
४९२	३४	छलूओ	छलुओ
४९३	४	०यं जीव०	०यं नोजीव०
४९३	१२	०न्तत्वे दोष०	०न्तत्वदोष०
४९३	१७	०दि पुच्छम्	०दिपुच्छम्
४९३	२३	०कोलिया०	०कोइला०
४९३	३३	पृथग	पृथग्
४९४	१४	०कोलिया०	०कोइला०
४९४	१४	छिन्नम्मि	छिन्ने वि
४९४	३०	जहा	जह
४९४	३१	वस्तुन्येव	वस्तून्येव
४९५	७	घटाच्छि०	घटात् छि०
४९५	१३	०णिमु०	०णिम्मु०
४९६	५	केइ	केई
४९६	२५	०वस्य जीवस्कन्धादे०	०वस्याऽजीवस्कन्धादे०
४९७	१	०से एव	०से स एव
४९७	१६	०देश एव	०देशः स एव
४९७	२२	०मतावरो०	०मतोपरो०(?)
४९७	२८	अगे०	अग्गे०
४९८	९	छम्मासा	छम्मास
४९८	९	०कट्टिटऊ०	०कड्ढिऊ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४९८	९	अह०	आह०
४९८	३३	ओयाल०	चोयाल०
४९८	३८	एकचत्वा०	चतुश्चत्वा०
४९९	२२	०ढवीं	०ढविं
५००	२८	०लक्षणं	लक्षणा
५००	२८	नोपृथ्व्येव	नोपृथ्वी पृथ्व्येव
५००	२८	मन्तव्यम्	मन्तव्या
५०१	२२	०वो जीवं	०वो नोजीवं
५०२	१३	०पुष्प०	०पुष्य
५०२	१३	०पुष्प०	०पुष्य
५०२	१३	०पुष्प०	०पुष्य
५०२	२८	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	२८	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	२८	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	२८	पुष्प०	पुष्य०
५०२	२९	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	२९	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	३०	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	३०	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	३१	०पुष्प०	०पुष्य०
५०२	३७	०ब्राह्मण०	०ब्राह्मण०
५०३	१३	०पुष्प०	०पुष्य०
५०३	१६	०पुष्प०	०पुष्य०
५०३	१८	०पुष्प०	०पुष्य०
५०३	१९	०पुष्प०	०पुष्य०
५०३	२१	०ष्यति	०ष्यते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५०३	२५	०पुष्प०	०पुष्य०
५०३	२६	०पुष्प०	०पुष्य०
५०३	२७	०पुष्प०	०पुष्य०
५०३	३०	०पुष्प०	पुष्प०
५०३	३७	सूईक०	सूइक०
५०४	२	०पुष्प०	०पुष्य०
५०४	१२	निवत्ती	निहत्ती
५०४	१३	तत्र निका०	तत्राऽनिका०
५०४	१७	समाकीर्ण०	समाचीर्ण०
५०४	३१	कुंचुओ	कंचुओ
५०४	३६	जावज्जीव०	जावजीव०
५०५	१४	०णामेन	णामेण
५०५	२०	०पुष्प०	०पुष्य०
५०७	६	०भावओ	०भावाओ
५०७	१७	०मवथानात्	०मवस्थानात्
५०७	२९	०भिहिंसा०	०भिर्हिंसा०
५०८	७	०ख्यानप०	०ख्यानमप०
५०८	३२	भग्गवओ	भग्गव्वओ
५०९	३	०क्षेपेण०	०क्षेपण०
५०९	१७	सुरेषु	सुरेसु
५१०	४	चेयओ	चेययओ
५१०	२४	बेई	बेइ
५१०	२६	पुष्प०	पुष्य०
५१०	३१	०पुष्प०	०पुष्य०
५१०	३३	०पुष्प०	०पुष्य०
५१३	३४	०त्थं विस०	०त्थंति विस०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५१४	३८	ढज्झ०	डज्झ०
५१४	३९	देहार्थं	देहार्थमिति
५१५	९	शुषं	शेषं
५१५	२१	०साहणं	०साहण
५१५	२७	महारात्रात्	महावातात्
५१५	३४	०धम्ममुक्क०	०धम्मसुक्क०
५१५	३६	सुयपट्ट०	तुयट्ट०
५१६	१	हीखद्दे	हिए खद्ध
५१६	२	खड्डे	खद्धे
५१६	१७	अ सहु०	असहु०
५१६	२४	सव्वद०	सव्वद्द०
५१६	२९	०परिसहा	परीसहा
५१९	६	अर्धोद्द०	अथोद्द०
५१९	१३	रूढकत्वात्	रूढत्वात्
५१९	३४	दो	दे
५२१	२१	विपडि०	विप्पडि०
५२२	१३	दिर्तिं	दिंति
५२२	३७	कृतस्यासाधू०	कृतस्य साधू०
५२३	५	मिच्छाद्दिट्ठि०	मिच्छद्दिट्ठी०
५२३	२१	०मोऽणु०	०मो अणु०
५२३	३२	जं समु०	जमसमु०
५२४	१४	०स्सेव सव्व०	०स्स न सव्व०
५२५	१७	आयाए	आवाए
५२६	२०	०त्तमयं	०त्तमियं
५२६	२०	भावेसु	दव्वे
५२६	३८	०त्रमयं	०त्रमिदं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५२७	१२	जीव इति	जीवगुण इति
५२९	१	सयं	सइ
५३०	३२	०तेऽभि०	तेऽनभि०
५३३	३	पज्जाय०	पज्जय०
५३४	२६	०णुमई	०णुमइं
५३५	२९	०गई	०गइ
५३५	२९	०ट्ठिई	०ट्ठिइ
५३६	३०	च तिसृ०	चतसृ०
५३७	१७	यत् कि०	यत्कि०
५३७	२७	०टोद्विसं०	०टोर्द्धिसं०
५३७	३१	सगडद्दिसं०	सगडुद्धिसं०
५३८	२	तवा	तमा
५३८	३	पइक्खणओ	पयक्खिणओ
५३८	३	तवा	तमा
५४०	२६	०द्दादस०	०द्दाओऽस०
५४०	२६	०चारित्त०	०चस्ति०
५४०	२९	०सेहो	०सेह (?)
५४१	२२	०वादिज०	०वादिर्ज०
५४१	३१	०मयात्	०मतात्
५४२	११	त ओवा	तओ वा
५४२	२३	पूर्वप्रथमसामायिकद्वयस्य	प्रथमसामायिकद्वयस्य पूर्वप्रति०
५४३	२९	चउरो ति०	चउरो वि ति०
५४३	२९	चउरो	चउर
५४३	३३	०प्रतिन्नता०	०प्रतिपन्नता०
५४४	३२	पूर्ववददग्ध०	पूर्ववनदवदग्ध०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५४६	१७	जपा-कु०	जपाकु०
५४६	२१	०लेश्याया	०लेश्यायां
५४६	३५	०आहोर	०आहारे
५४७	२७	०तिसामा०	०तिवर्जसामा०
५४७	३६	०णुमुक्के	०णुम्मुक्के
५४८	५	सुय०	सुए०
५४८	७	०न्ति, विषयप०	०न्ति विषयः । प०
५४८	१२	सव्वदव्व०	सव्वद्दव्व०
५५१	४	सेढी०	सेढि०
५५३	१०	सहस्स०	सहस०
५५३	१५	सहस्स०	सहस०
५५४	८	सुदिट्ठी	सुदिट्ठित्ति
५५४	१५	०पविट्ठ	पविट्ठं
५५४	१५	सप्पडि०	सपडि०
५५५	९	आउ	अउ
५५५	१२	वासो	वाऽऽसो
५५५	१६	०माय	०मय
५५५	३६	अट्ठ उदा०	अट्ठुदा०
५५५	३७	सामायि०	समयि०
५५६	१०	०णुगमो	०णुगमे
५५६	२७	०इ मंगलं	इमंगलं
५५६	३८	भवेद् मङ्गलं	भवेदादिमङ्गलं
५५७	२८	तहं च	नहं च
५५७	२८	ववर०	वऽऽवर०
५५७	३९	तथा च	नभश्च
५५८	७	०नाशा शू०	०नाशशू०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५५८	१५	नासंतं ?	नो संतं ? [?]
५५८	२१	धनाधिकं	धनादिकं
५५८	२१	चापल०	चोपल०
५५९	३०	०दिकार्यसं०	०दिकालसं०
५६१	२७	तदा कथ०	तदाऽस्य कथ०
५६२	५	वासना०	वाचना०
५६२	१३	यस्तस्य	यत्तस्य
५६३	३४	निहणाइ	निह्नाइ
५६३	३५	०दिद्रव्य०	०दिर्दव्य०
५६६	१३	०कैकताग्र०	०कैकभागग्र०
५६७	९	पडिपज्ज०	पडिवज्ज०
५६७	२०	नो खंधो	नोखंधो
५६७	२०	०क्करो	०क्कारो
५६८	१३	नमस्कारो	०नमस्कारे
५६८	२८	०पन्नस्य	०पन्नानां
५७१	२२	तग्गुणाओ	तग्गुणओ
५७२	७	नमस्कारल०	'न'कारल०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माहिती

नवां प्रकाशनो

१. **सप्तभङ्गीविंशिका.** कर्ता : आ. अभयशेखरसूरि; प्र. दिव्यदर्शन ट्रस्ट, धोळका; सं. २०६१

जैनदर्शन-सम्मत सप्तभङ्गी विषे कर्ता आचार्यश्रीए पोतानी कल्पनाशक्तिनो सदुपयोग करीने केटलीक अनुप्रेक्षा आ पुस्तकमां करी छे. मूळ रचनामां २० पद्यो, ते उपर संस्कृतमां तेमज गुजरातीमां विवेचन आ पुस्तकमां समावायां छे. अनुप्रेक्षा अने ऊहापोह अथवा विमर्श स्वरूप आ ग्रन्थ गणाय; आने 'शास्त्र' नो दरज्जो आपवानुं कदाच वधु पडतुं बनी रहे; निबन्ध जरूर कहेवाय.

कर्ता आचार्यश्री शास्त्रोनां ऊंडा अभ्यासी छे, तेथी तेमणे सप्तभङ्गीने अंगे करेलुं चिन्तन अभ्यासीओने रसप्रद बनी रहे तेवुं छे. विद्वानोए आ पुस्तक वांचवुं जोईए अने तेमां प्रस्तुति पामेला मुद्दाओ परत्वे ऊहापोह करवो जोईए.

पुस्तकना छेडे 'अवशिष्ट वातो' एवा शीर्षक हेठळ 'अनभिलाप्य-पदवाच्यत्व' विशे जे विधान तथा विमर्श थयां छे, ते जरा वधु गम्भीर चिन्तन मागी ले तेम लागे छे. विशेषावश्यकभाष्यना विवरणकार आचार्यश्री **पोताना विवरणमां ''यद्यपि एते भावा 'अनभिलाप्य' इति पदेन वाच्याः सन्त्येव, तथापि विशिष्टसंकेतितपदवाच्यत्वालाभाद् अनभिलाप्याः कथिताः''** आवा प्रकारनुं कांइक लखी शक्या होत; पण तेमणे पण आवुं कशुं खुलासारूप लखवानुं टाळ्युं छे तेनो मर्म पण विचारवो तो रहे ज.

पुस्तकना प्रारम्भिक पृष्ठोमां पृ. २२ पर दुर्गपदविवरणनी गाथाओमां **'उवएसा'**ने स्थाने **'(अणुप्पेहाओ)'** मूकी शकाय एवुं विधान ए पण जरा साहसिक विधान लागे. 'उवएसा' नो अर्थ 'अनुभव' थाय, जे एक यौगिक साधनाप्रक्रियाजनित खास भूमिका तरफ संकेत करे छे. 'अनुप्रेक्षा' ए आनाथी घणी जुदी बाबत गणाय अने तेनो सम्बन्ध चिन्तन के ऊहापोह के विमर्श साथे जोडवानो योग्य गणाय.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपरांत, 'संशोधक महात्माओना उद्गारो' छाप्या छे तेमां पण घणी अतिशयोक्ति थती जणाय छे. प्रशंसात्मक उद्गारो वैयक्तिक पत्रव्यवहारमां लखाय तेनी ना पाडी न शकाय; पण लखनारा विद्वान होय तो विवेकभान न चूके तेटली तो अपेक्षा राखी शकाय; अने छतां कोईए कांई लखी नाख्युं तो ते तेवुं ने तेवुं छापी मारवुं, तेमां औचित्य तो न ज गणाय.

२. **परमपददायी आनन्दघन पदरेह.** १-२. चिन्तक : खीमजीभाई, संस्करण: पं. मुक्तिदर्शनविजयगणि; प्र. अन्धेरी गुजराती जैन संघ, मुम्बई, ई. २००६, सं. २०६२.

योगीराज आनन्दघनजीकृत ११० पदो उपर गुजराती भाषामां विवेचननो आ ग्रन्थ बे भागोमां वहेंचायेलो छे. अध्यात्मनी के तत्त्वबोधनी दृष्टिए तैयार थयेल आ ग्रन्थ होई संशोधनक्षेत्र माटे खास प्रस्तुत न गणाय. छतां प्रथम नजरे अवलोकन करतां एक-बे बाबतो नजरे पडी छे ते अत्रे नोंधवी जरूरी लागे छे.

(१) भाग १ मां पृ. ३५३ उपर ४९ मा पदना विवेचनमां बीजी कडीनुं विवेचन जरा विचित्र थयुं जणायुं. ए कडीमां '**सेन**' पद छे तेनो अर्थ 'सहेवुं' एवो करवामां आव्यो छे, जे तद्दन खोटो अर्थ छे, अने तेने कारणे आखी कडीनुं अर्थघटन खोटुं थयुं छे. खोटुं तो कई हदे ? विवेचनकारे (पृ. ३५४) आनन्दघन उपर तान्त्रिको वगेरे द्वारा मारणादि प्रयोगो अजमावी रह्या होवानी कल्पना, आ कडीना पोताने बेठेला अर्थना आधारे, करी छे; अने ते माटेनी व्यथा योगीराजे आ कडीमां व्यक्त कर्यानी कल्पना पण तेमणे करी नाखी छे.

अध्यात्मनी प्रीति होय तो आवां पदो निरन्तर गाई जरूर शकाय; वागोळी पण शकाय; पण तेना उपर विवेचन लखवानुं साहस करवुं ते तो घणी सज्जता मागी ले छे. सांभळ्युं छे के मस्तयोगी ज्ञानसारजीए दायकाओ सुधी आनन्दघननां स्तवनो पर चिन्तन कर्या कर्युं, त्यारे छेक पाछली वये टबो के अर्थ लखवा माटे कलम उपाडी हती - तेय डरतां हृदये - रखे क्यांक योगीराजना भावोने अन्याय थई जाय !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मध्यकालीन पद्यरचनाओ पर विवेचन करवा इच्छनार पासे, मध्यकालना कविओ विषे, तेमनी भाषा विषे, तेमनी निरूपणरीति विषे, जे ते कविना समयमां चालता भक्ति, अध्यात्म तथा काव्यप्रकारोना प्रवाहो विषे, सामान्य जाणकारी होवी अनिवार्यपणे जरूरी छे. तेमांय भाषाना - शब्दना प्रयोगो विषे तो थोडीक जाणकारी होवी ज जोईए. आटली सामान्य भूमिका विना कोई कलम उपाडे, तो ते दुःसाहस ज बनी रहे.

आ (४९मुं) पद ए प्रेमलक्षणा भक्तिपरक पद छे. एमां कवि प्रियतमना विरहमां व्याकुळ एवी प्रियतमाना रूपे उपस्थित थया छे, अने पोतानी विरहवेदनाने वाचा आपी रह्या छे. कवि पोकारे छे के 'मारा कंचनवरणा नाथ साथे कोई मारो मेळाप करावो ने !'

आ आर्त्तनाद के आजीजीना अनुसन्धानमां कविरूप प्रियतमा पोतानी विरहाकुळ स्थितिनुं बयान आगळ वधारतां आ कडीमां कहे छे के :

"कौन सयन जाने पर मन की, वेदन विरह अथाह
थर थर धुजै देहडी मारी, जिम वानर भर-माह"...

कवि कहे छे के - एवो कोण सयन-स्वजन / सज्जन होय / हशे के जे पर एटले कोईकना - बीजाना मननी अथाग एवी विरहवेदनानो ताग पामी शके ? (बीजी रीते, एवो कोई सज्जन अहीं हशे के जे कोईना मननी विरहवेदनाने तागी शके ?)

प्रियतम ! मारी काया (तुज विरहव्यथाजन्य व्याकुलतामां) थर थर धूजी रही छे ! (कोनी जेम ? तो) जेम माह (माघ) मासनी कडकडती ठंडीमां वानरनी काया थथरे तेनी जेम !

(प्रस्तुत पुस्तकमां विवेचनकारे **भरमाह**नो अर्थ वळी '**भरमायेल**' एवो कर्यो छे !)

आटलो अर्थ उघडे पछी योगीराज उपर तान्त्रिकोना मारणादिप्रयोगोनी कल्पना तथा तेना प्रत्याघातरूपे तेमणे आ शब्दो गाया होवानी कल्पना मिथ्या ज जणाय.

चिन्ता एटली ज थाय के आ ग्रन्थमां आवुं तो घणुं बधुं हशे, अने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो आनन्दघनने केटलो बधो अन्याय थशे ? अने वाचकोने केवा आनन्दघन लाधशे ? ओछामां पूरुं, आ बे पुस्तको साथे ४ MP3 नी Disk नो Set पण प्रसिद्ध थयो छे !

(२) ग्रन्थना भाग-२मां पृ. ३५८ पर १०९ मुं पद जे जोवा मळे छे, ते तेनी भाषा, रचनाशैली अने गेयता आदि तमाम दृष्टिए तपासतां ते पद आनन्दघननुं नहि, पण तेमना नामे चडावी देवायेलुं एकदम अर्वाचीन गणाय तेवुं पद छे. अनुभव, सुमति, चेतनजी जेवी शब्दावली प्रयोजवामात्रथी कोई नवरचनाने आनन्दघनना नामे न खतवी शकाय. विवेचक पासे आवा विवेकनी अपेक्षा सेवीए तो ते वधु पडती नथी.

अेकंदरे, आनन्दघनप्रेमीओने रस पडी शके तेवुं प्रकाशन.

३. **जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास.** ले. मोहनलाल दलीचंद देशाई, पुनर्मुद्रणना सम्पादक : आ. विजयमुनिचन्द्रसूरि; प्र. ॐकारसूरि ज्ञानमन्दिर, सूरत, ई. २००६, सं. २०६२.

मो. द. देशाईए जैन इतिहास अने साहित्यना क्षेत्रमां जे कार्य कर्युं छे ते अद्यावधि अजोड ज बनी रह्युं छे. तेमनुं स्थान ले अथवा तेमणे ज्यांथी अधूरुं मूक्युं छे त्यांथी ते काम आगळ वधारे तेवो बीजो विद्वान हजी सुधी तो पाक्यो नथी. आ विद्वाने ई. १९३३ना अरसामां आ अद्‌भुत इतिहास ग्रन्थ/सन्दर्भग्रन्थ रच्यो अने साहित्यजगतने आप्यो हतो. आ ग्रन्थनो उपयोग, अभ्यासुजनो तथा विद्वानो-संशोधको, एक अनिवार्यपणे उपयोगी एवा सन्दर्भ ग्रन्थ तरीके, हमेशां करतां होय छे.

आ ग्रन्थनी शुद्धि-वृद्धि-पूर्ति करवानुं भगीरथ कार्य सद्‌गत प्रा. जयन्तभाई कोठारीए हाथमां लीधेलुं. तेमणे ते काम कर्युं होत तो आपणने जैन गूर्जर कविओ जेवी एक श्रेष्ठ ग्रन्थावली मळत, एमां शंका नहि. पण दुर्भाग्ये तेओ स्वर्गस्थ थया अने आ आदरवा धारेलुं काम पड्युं रह्युं.

आ. श्री मुनिचन्द्रसूरिजीए जयन्तभाईनी नोंधोनो प्रायः उपयोग करवापूर्वक तथा पोतानी क्षमता तथा शक्यता मुजब आ ग्रन्थनुं पुनः सम्पादन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्युं अने अलभ्यप्राय आ ग्रन्थने सुलभ बनाव्यो, ते तेमना द्वारा थयेली उत्तम साहित्यसेवा छे.

आ ग्रन्थनी प्रस्तावना लखतां आ. श्री प्रद्युम्नसूरिजीए निर्देश्युं छे के "आना जेवो जैन शिल्पस्थापत्यनो इतिहास रचवानो बाकी छे. कोई मातबर संस्था आ बीडुं झडपवा जेवुं छे."

आ वांचतां सूझेली टिप्पणी : हजी तो पाशेरामां पहेली पूणीनी जेम, ७-८ तीर्थोनो शिल्पशास्त्रीय परिचय आपती पुस्तिकाओ, विख्यात स्थापत्यविद् डो. मधुसूदन ढांकीए आपी; त्यां तेनो विरोध आपणा कहेवाता धार्मिको द्वारा थई गयो, अने ते विरोधने मान्य गणीने आणन्दजी कल्याणजी पेढीए ते पुस्तिकाओने withdraw पण करी नाखी ! आ बाबतनी डॉ. ढांकीने जाण पण कराई नथी ! आजे तो खुद डो. ढांकीने ते पुस्तिकाओ जोईती होय तोय न मळे तेवी स्थिति छे. आ संजोगोमां जैन शिल्पस्थापत्यनो इतिहास लखवापात्र गणाय खरो ? अने ते लखवा माटे डो. ढांकीथी श्रेष्ठ कोई अधिकारी विद्वज्जन छे खरा ? अने मातबर संस्थानी भूमिका केवी होय ते तो उपरोक्त बाबतमां अनुभवाय ज छे ! अस्तु.

इतिहासबोधना कारमा अभावथी ग्रस्त एवा समाज सामे, पोते चोक्कस साम्प्रदायिक दृष्टिकोण धरावता होवा छतां, मो. द. देशाईना आ महान् इतिहासग्रन्थने यथावत् रूपमां पुनः सुलभ करी आपवा बदल सम्पादकश्रीने अभिनन्दन !

४. **पाइअ (प्राकृत) भाषाओ अने साहित्य.** प्रणेता : प्रो. हीरालाल रसिकलाल कापडिया; सं. आ. मुनिचन्द्रसूरि; प्र. ॐकारसूरि ज्ञानमन्दिर, सूरत; ई. २००६, सं. २०६२.

ही.र.कापडिया ए जैन विद्वज्जगतनुं एक मातबर तेम माननीय नाम छे. तेमने रचेल आ सन्दर्भग्रन्थ वर्षोथी अलभ्य हतो, ते सम्पादकश्रीए विविध विगतोथी संवर्धित करवापूर्वक सुलभ करी आप्यो छे. उत्तम प्रकाशन !

—x—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवरणचित्र

महायोगी आनन्दघननां रहस्यभर्यां जिनस्तवनो उपर तेनुं रहस्योद्घाटन करतो टबो बनावनार महात्मा 'ज्ञानसार'जीनुं एक प्राचीन चित्र : चित्रना पृष्ठ भागे ''मस्तयोगी ज्ञानसारजी'' एवुं लखाण पण छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org